❖वर्ष छः ❖ अंक एक ❖ ❖ अप्रैल-जून २०१३❖

संरक्षकः
●डॉ. बुद्धिनाथ मिश्र,
●डॉ. लक्ष्मीशंकर बाजपेयी
●विश्वयात्री डॉ. कामता कमलेश

परामर्शः
●डॉ.श्यामसिंह 'शशि'
●डॉ. धनंजय सिंह,
●डॉ. रूपचन्द्र शास्त्री 'मयंक'
●सग़ीर अशरफ़,

प्रधान संपादकः
●आशा शैली-९४५६७१७१५०, ८९५८११०८५९

संपादकः
●कुहेली भट्टाचार्य-०९७११२५०५५६
●आनन्दगोपाल सिंह बिष्ट, ०९४१०७१८२००

विधि-परामर्श
●दुर्गा सिंह मेहता

प्रसार मंत्री
●डॉ साधाना अग्रवाल ९४५७२८१५८८

विशेष सहयोगी-
●निर्मला सिंह', मो.९४१२८२१६०८
●विनय सागर 'जायसवाल', ७५२०२९८८६५
● मंजु पाण्डे 'उदिता' (कुमाउंनी) मो.९५३६५१०५०१
●दर्शन बेज़ार, आगरा-९७६०१९०६९२
●प्रेमलता पाण्डेय, दिनेशपुर,
●कृष्णचन्द्र महादेविया, सुन्दरनगर, जिला मण्डी (हि.प्र)-०९८५७०८३२१३
●डॉ. वेदप्रकाश प्रजापति 'अंकुर' -९४१२९४३०४२
●स्नेहलता शर्मा (लखनऊ) मो. ९४५०६३९९७६

सम्पादकीय कार्यालय एवं पत्र व्यवहार का पताः-कार रोड, बिन्दुखत्ता, पो. -लालकुआँ, जिला- नैनीताल, पिन-२६२४०२ (उत्तराखण्ड)
मो. ०९४५६७१७१५०, ८९५८११०८५९
Email-asha.shaili@gmail.com

●**लेख**-पर्यायवाची थे संघर्ष के:विष्णु प्रभाकर-कुहेली भट्टाचार्जी ११
भारतीयता के आवारा मसीहा:विष्णु प्रभाकर-डॉ. पशुपतिनाथ उपाध्याय १३
पद्म विभूषण :विष्णु प्रभाकर- वीना लोहानी- १५
मानवतावादी:विष्णु प्रभाकर-विमला जोशी १६
●**ग़ज़लें**-मो. कासिम खान 'तालिब', रवि प्रताप सिंह, तारकेश्वर शर्मा 'विकास', सुप्रिया ढाँडा 'वाटिका', उदय करण 'सुमन', इन्द्रपाल सिंह परिहार 'अभय' २४
उमा श्री, हितेश कुमार शर्मा, डॉ. श्रीकान्त शुक्ल, केशव शरण, डॉ. रसूल अहमद 'सागर' ३२
●**गीत**-डॉ. ब्रजेश कुमार मिश्र, डॉ. सतीश चन्द्र 'राज', स्वर्ण रेखा मिश्रा ३१
●**काव्यधारा**-डॉ.मधु भारतीय, डॉ. राम निवास 'मानव', रामेश्वर प्रसाद गुप्ता 'इंदु', आचार्य भगवत दुबे-०४, प्रोमिला भारद्वाज, हंसराज भारती, बुद्धेश्वर प्रसाद सिंह-०९, नरेश कुमार 'उदास', डॉ. वेदप्रकाश प्रजापति 'अंकुर', श्रीमती सुदर्शन डोगरा, कवि कृष्ण सौमित्र-१०, डॉ. अशोक गुलशन, गिरि मोहन गुरु 'नगर श्री'-१२, जया नर्गिस-१७, सतीश गुप्ता 'द्रवित', प्रभु त्रिवेदी,' शम्भुसाद भट्ट 'स्नेहिल' २१, सुधा राजे-२७, ठाकुर स्नेहा सिंह-२९, सत्यपाल सिंह 'सजग'-३०, क्षमा पाटले- ४८
डॉ. रूपचन्द्र शास्त्री 'मयंक', सुषमा भण्डारी, यशपाल 'स्नेही'-कवर पृष्ठ
●**कथा साहित्यः**-(कहानी) प्रकाश चन्द्र लोशाली-२२, पवन चौहान- २८
●**लघुकथाएँ**-सीताराम गुप्ता-२३, मदन मोहन उपेंद्र-२७, सुरेंद्र मंथन-४७
(बोधकथा) शिवम वर्मा ४३
●**धारावाहिक उपन्यास-आशा शैली-** ३५
स्तम्भः-
●**धरोहर**-भारत के ह्वेन सांग राहुल सांकृतयायन.....श्याम सिंह रावत ०५
●**साक्षात्कार**-राजेंद्र परदेसी १८
●**संस्मरण**-बैसाखी, यमुना और बच्चे-डॉ कविता वाचक्नवी २५
●**साहित्य समाचार** ३३
●**नई कलम**-श्रीमती प्रियंका पाठक ३८
●**समस्या**-जय प्रकाश तापड़िया ३९
●**व्यंग्य**-राजीव तनेजा ४०
●**बालोद्यान-बातें विज्ञान की, नन्हीं कलम**-कोमल दिवाकर ४१
●**कुमाऊँनी**-डॉ.जयदत्त उप्रेती, मंजुपाण्डे 'उदिता'- ४२
●**भारत दर्शन-(हिमाचल)**-डॉ. विजय कुमार पुरी ४४
●**समीक्षा**-सुरेंद्र गुप्त-४८, संतोष कुमार सिंह ४९
●**डाकघर**- ५०

मूल्य-एक प्रति २५/-, वार्षिक १००/-, द्विवार्षिक १८०/-,
आजीवन १०००/-, संरक्षक सदस्य २१००/-

शैल-सूत्र में प्रकाशित रचनाओं के प्रति सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। लेखक अपने विचार प्रेषण के लिए स्वतन्त्र है। शैल-सूत्र परिवार के सभी सदस्यों के पद अवैतनिक हैं। प्रत्येक कानूनी विवाद का निपटारा पत्रिका के सम्पादकीय कार्यालय का विधि क्षेत्र होगा।

स्वामी, प्रकाशक तथा मुद्रक आशा शैली (कार रोड, लालकुआँ, जि. नैनीताल) ने एच.जे. इंटरप्राइजेज़, खानचन्द मार्केट, हल्द्वानी (नैनीताल) से मुद्रित कराया। सम्पादक कुहेली भट्टाचार्य (ए-१२३, सुन्दर अपार्टमेंट जी. एच.-१० नई दिल्ली-८७)

कार्यालय नगर पंचायत लालकुआँ, जिला नैनीताल

नगर पंचायत लालकुआँ के नव निर्वाचित बोर्ड की ओर से हार्दिक शुभकामनाओं के साथ नगर पंचायत लालकुआँ शहर के सभी क्षेत्रवासियों से यह अपील करती है कि-

१. यह नगर आपका है, इसे साफ रखने में अपना सहयोग प्रदान करें।
२. कूड़ा प्रबंधन की शुरुआत स्वयं से करें, जिससे स्वच्छ रहे आपका घर आँगन।
३. ४० माइक्रोन से कम पॉलीथिन का उपयोग न करें। उपयोग करते पाये जाने पर रुपया पाँच सौ रुपए का अर्थदण्ड लिया जाएगा। पॉलीथिन हटाएँ पर्यावरण बचाएँ।
४. अपने घर से निलने वाले जैविक-अजैविक कूड़े को पृथक-पृथक कूड़ेदान में डालें।
५. नगर में सफाई के बाद नालियों, सड़कों, गलियों, आदि में कूड़ा न फेंकें। यदि सफाई के उपरांत कूड़ा फेंकते पाए गए तो रुपया पाँच सौ का अर्थदण्ड लिया जाएगा।
६. मच्छरों से बचाव हेतु मच्छरदानी का उपयोग करें। घर के आस-पास पानी इकट्ठा न होने दें। गमलों, कूलर, टायर आदि में पानी अधिक समय तक एकत्र न होने दें।
७. फोगिंग के समय पीने का पानी एवं खाद्य पदार्थों को ढक कर रखें।
८. बुखार आदि होने पर शीघ्र चिकित्सक को दिखाएँ। डायरिया से बचाव हेतु बासी भोजन व खुले में बिकने वाली खाद्य सामग्री सेवन न करें।
९. सार्वजनिक स्थलों पर अतिक्रमण न करें। सड़क व नालियों के ऊपर सामग्री न रखें।
१०. भवन कर आदि करों का समय से भुगतान कर छूट का लाभ उठाएँ। साथ ही अपने व्यवसाय से संबंधित लाइसेंस प्राप्त कर ही व्यवसाय करें।

(राजू नबियाल)
अधिशासी अधिकारी
नगर पंचायत लालकुआँ
जिला-नैनीताल

(राम बाबू मिश्रा)
अध्यक्ष
नगर पंचायत
लालकुआँ
जिला-नैनीताल

श्री धनसिंह, श्री लक्ष्मण सिंह खाती, श्रीमती राधा, श्रीमती रचना गिरी, श्री राजकुमार सेतिया, श्रीमती सुधा श्रीवास्तव, एवं श्री अनुज। सदस्य नगर पंचायत लालकुआँ।

यदि आप हर कार्य पूरी लगन से करते हैं तो आपको पछताना नहीं पड़ेगा

सफर जारी है

जी हाँ! मित्रों-शुभ चिन्तकों के रोकने-टोकने के बाद तो पत्रिका प्रकाशित करना मेरे लिए पर्वतारोहण जैसा दुष्कर कार्य हो गया। सभी कहते, 'मना किया था न! अब भुगतो।' किन्तु मैंने देखा, शैल-सूत्र पत्रिका का सफर ज्यों-ज्यों आगे बढ़ता जाता है त्यों-त्यों मित्रों, स्वजनों की संख्या बढ़ती जा रही है। दरअसल छोटी-छोटी सफलताएँ भी इंसान को बहुत बड़े हौसले दे जाती हैं, इरादों में कुछ और मज़बूती आ जाती है और अपने आप में एक संतुष्टि का प्रस्फुरण भी होता है। कुछ सार्थक करने का अहसास हमारे साथ-साथ चलता है। नवोदितों/विद्वान लेखकों से प्राप्त सामग्री न केवल पाठक वर्ग, अपितु पत्रिका परिवार के लिए भी बहुत उपयोगी होती है। कभी-कभी वे सब बातें, वे सब जानकारियाँ जो हमें अपेक्षित होती हैं, और जो ज्ञात होने के बाद भी कहीं मस्तिष्क के किसी कोने में सुषुप्तावस्था में पड़ी होती हैं अचानक प्राप्त आलेखों द्वारा झकझोर कर जगा दी जाती हैं।

पत्रिका शुरू करने से पहले, जब योजना मेरे मन में ही थी, मैं और कुहेली भट्टाचार्जी दोनों विष्णु प्रभाकर जी से मिलने गए। इससे पहले मैंने जिस भी लेखक से इस योजना पर बात की सबने मुझे निरुत्साहित ही किया। सब के अपने-अपने अनुभव भी थे और मेरी परिस्थितियों को देखते हुए मेरे प्रति एक सहज संवेदना भी थी कि 'पल्ले है नहीं दाने, अम्मा चली भुनाने।' यह औरत क्या करेगी? दो-चार अंक निकालकर उत्साह ठंडा पड़ जाएगा, किन्तु विष्णु प्रभाकर जी ने ऐसा कुछ नहीं कहा। उन्होंने हमारा हौसला बढ़ाने के लिए शुभकामना संदेश भी लिखकर दिया और यह भी कहा कि 'गिर पड़ने के भय से क्या हम रास्ता चलना ही छोड़ दें?'

प्रवेशांक लेकर हम दोनों फिर उनसे मिलने गए। अंक देखकर वे बहुत प्रसन्न हुए और उसे सफल प्रयास कहा। इस अवसर पर उन्होंने यह भी कहा कि, ''मैं सोचता था कि सौ वर्ष पूरे करूँगा, लेकिन सेहत को देखते हुए अब यह सम्भव नहीं लग रहा। फिर भी ९५ तो पूरे करूँगा ही।'' घर लौटकर मैंने कुहेली भट्टाचार्जी से कहा, 'सामग्री एकत्र करो तो नए वर्ष में हम विष्णु प्रभाकर विशेषांक निकाल दें' वह हँसने लगी और बोली, 'सबर करो, ठंडा करके खाओ।' लेख मांगने पर अन्य लेखकों को भी लगा कि 'शायद यह कुछ ज्यादा बोल गई है' और मैं चुप लगा गई, परन्तु मन में कहीं एक गाँठ थी जो रह-रह कर चुभती थी। केवल डॉ. पशुपतिनाथ उपाध्याय ने एक लेख दिया किन्तु इससे क्या होता? फिर जब विष्णु जी के निर्वाण का समाचार मिला तो मुझे बहुत दुख हुआ कि मैं उनके जीवन-काल में यह विशेषांक उनके हाथों में देकर उनसे आशीर्वाद नहीं ले पाई किन्तु शैल-सूत्र के छठे वर्ष में अचानक ही कुछ सामग्री हाथ आ गई चाहे यह पर्याप्त नहीं है फिर भी मेरी यह फांस भी निकल गई।

संतोष है कि आज शैल-सूत्र ने अपनी पहचान बना ली है। आज कहीं से भी कोई रचनाकार इसके साथ चलने में संकोच नहीं करता और मुझे अपने आस-पास ही इतना सहयोग प्राप्त हो जाता है कि कहीं कोई कमी नहीं रहती। कुहेली भट्टाचार्जी तो आरम्भ से ही साथ चल रही हैं, परन्तु इस समय विनय सागर जायसवाल (बरेली), मंजू पाण्डे उदिता (हल्द्वानी) और प्रेमा पाण्डे (दिनेशपुर) की मैं विशेष आभारी हूँ। जो पत्रिका के मजबूत स्तम्भ बन गए हैं। इसके अतिरिक्त मैं अपने अन्य सहयात्रियों की भी विशेष आभारी हूँ जो समय-समय पर मुझे आर्थिक सम्बल भी दे रहे हैं। पाठक वर्ग का आभारी होना तो पहला कर्तव्य है। बहुत दूर-दूर से पत्र आते हैं, फोन आते हैं, पत्रिका माँगी जाती है। अभिभूत हूँ इतना स्नेह पाकर। इस सब के लिए भावभूमि तैयार करने वाले अपने गुरु स्व. डॉ. महाराजकृष्ण जैन का ऋण चुकाना तो मेरे लिए सम्भव ही नहीं। मुझे खुद को पहचानना सिखाने वाले, कदम-कदम पर मुश्किलों से लड़ने का मार्ग दिखाने वाले डॉ. जैन के श्री चरणों में प्रणाम करते हुए अगले अंक में मिलने का आश्वासन अपने सहयोगी रचनाकारों से/पाठकों से, आपसे चाहती हूँ। सफर जारी है। -आशा शैली

दोहे

डॉ. मधु भारतीय

खोल सकें तो खोलिए, बंद किया आकाश।
कभी बिना विश्वास के, मिलता नहीं प्रकाश।।
उड़ो बालको तोल 'पर', अन्तरिक्ष के पार।
खोज सभ्यताएँ नई, रखना भाईचार।।
अगर दूसरों से तुझे, सुनने मीठे बोल।
मन पर जो ताले पड़े, पहले उनको खोल।।
अभी ठहाके मारता, अभी हुआ निष्प्राण।
समय व्याध निर्मम बहुत, मारे सब पर बाण।।
क्यों टप–टप आँसू बहें, क्यों हिय उठती हूक।
मित्र शत्रु परिजन मिलें, लिए हाथ बंदूक।।
यह तिहाड़ की जेल–सा, लगता है अखबार।
नित्य पढ़ो हत्या, हरण, आत्मघात, व्यभिचार।।
सुई–छिद्र से हो गए, रिश्तों के सब अर्थ।
बूढ़ी आँखें घाव को, सीने में असमर्थ।।
मंहगी सब्ज़ी, अन्न, फल, वस्त्र गैस आवास।
और प्रदूषण से घिरे, दुष्कर लेना श्वास।।
दंगल हुआ चुनाव का, धूल चाटता ज्ञान।
ठग–तस्कर विजयी हुए, किडनेपर की शान।।

-के.जी.-९२, कवि नगर, ग़ाज़ियाबाद
मो.९९५३२०५९२४

डॉ. मधु भारतीय

डॉ. राम निवास 'मानव'

डॉ. राम निवास 'मानव'

राजनीति कुल्टा हुई, उल्टा–पुल्टा ढंग।
आगे–पीछे घूमते, सारे नंग–मनंग।।
राजनीति को क्या कहें, कुल्टा और छिनाल।
पत–पैसा सब लूटकर, किया देश बेहाल।।
राजनीति के मंच का, इतना ही है सांच।
जात–पात और धर्म का, होता नंगा नाच।।
राजनीति तुमने किया, सचमुच बड़ा कमाल।
नेता मालामाल हैं, जनता खस्ता हाल।।
घोटालों के रोग से, राजनीति है ग्रस्त।
राजनीति के कोप से जनता सारी त्रस्त।।
राजनीति जब से हुई, सत्ता का पर्याय।
जनता की आहें बढ़ीं, नेताओं की आय।।
राजनीति हावी हुई, हर मुद्दे पर आज।
आरक्षण की बात हो, या मन्दिर का काज।।
राजनीति करने चली, कुर्सी को आबाद।
उत्सुकता का वोट की, भाषा में अनुवाद।।
झण्डे, बैनर, रैलियाँ, पर्चे, चर्चे, चंग।
राजनीति के हो गए, सारे ढंग–कुढंग।।

-७०६, सै.-१३, हिसार-१२५००५
(हरि.), फोन. ०१६६२-२३८७२०

रामेश्वर प्रसाद गुप्ता 'इंदु'

गोवध, कन्या भ्रूण की, करते हत्या पाप।
कैसे माँ के भक्त हैं, कैसे मानव आप?
कन्या को कहता फिरे, देवी का अवतार।
फिर उसके ही भ्रूण को, रहा कोख में मार।।
पुत्र होय या पुत्रियाँ, करें न अंतर और।
बने एक के बाद इक, ज्यों गन्ने के पौर।।
निष्ठुर वे माँ–बाप हैं, पशु से भी बेकार।
जन्म से पहले मारते, कन्या इस संसार।।
बेटी–बेटा एक हैं, पोषण एक समान।
बेटों से ज्यादा तुझे, बिटिया दे सम्मान।।
जिस ममता की छाँव में, बैठे सारे लोग।
वो ही ममता मारते, मिलकर ये दुर्योग।।
मानव बरसाने लगा, पीड़ाओं के बाण।
कन्या का जीना कठिन, कौन बचाए प्राण।।

-बड़ा गाँव झांसी-२८४१२१ (उ.प्र.)
मो. ०९५५९३०७००७

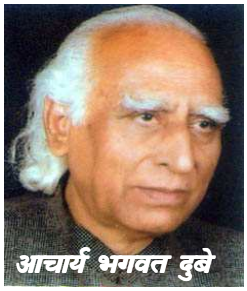
आचार्य भगवत दुबे

आचार्य भगवत दुबे

पका रहे प्रत्येक दल, राजनीति की खीर।
टाल–ठिठोली में रहे, घोटाले गम्भीर।।
अपराधी को दे रहा, जब कानून पनाह।
डरकर भागेगा नहीं, कैसे भला गवाह।।
घोटालों को कर लिया, सबने अंगीकार।
राजनीति की योग्यता, है अब भ्रष्टाचार।
ओढ़े भ्रष्टाचार के, सबने यहाँ दुकूल।
अतः चुनावी खर्च अब, हमसे रहे वसूल।।
रद्दी में बेचे गए, गीता, वेद–पुराण।
घर में रखा खरीद कर, एक विदेशी श्वान।।
अपराधी के घर मिले, जज लिखते जजमेंट।
जैसे डाक्टर की दवा, स्वयं करे पेशेंट।।
चौराहे पर है खड़ी, लोकतंत्र की लाश।
हर दल के नेता खड़े, उड़ा रहे उपहास।।

-पिसनहारी-मढ़िया के पास,
जबलपुर-४८२००३, मो. ९३००६२३९७५

भारत के ह्वेन सांग महापंडित राहुल सांकृत्यायन की अद्‌भुत जीवन यात्रा

-श्याम सिंह रावत

सैर कर दुनिया की गाफिल, जिन्दगानी फिर कहाँ।
जिन्दगानी गर रही तो नौजवानी फिर कहाँ।।

बहुभाषाविद् महापंडित राहुल सांकृत्यायन हिन्दी साहित्य के पुरोधा थे। बीसवीं शताब्दी के पूवार्द्ध में वैश्विक स्तर पर यात्रा-वृतांत तथा दर्शन के क्षेत्र में अतुलनीय साहित्यिक योगदान के कारण हिंदी के यात्रा-साहित्य का पितामह ही कहा जाता है। बौद्ध-दर्शन पर उनका शोध और लेखन मील का पत्थर माना जाता है जिसे उन्होंने श्रीलंका, तिब्बत, दक्षिण एशिया के देशों-जापान, चीन, मंगोलिया आदि देशों की अति कठिन खोज-यात्राएँ करके जन-सामान्य के लिए सहज बनाया। मध्य एशिया तथा कॉकेशस भ्रमण पर भी उन्होंने यात्रा-वृतांत लिखे जो साहित्यिक दृष्टिकोण से अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। घुमक्कड़ राहुल सांकृत्यायन द्वारा ग्राम-नगर से लेकर दुनिया भर के देशों, महाद्वीपों, अति गर्म व निर्जन मरुस्थलों, धमनियों के रक्त प्रवाह को भी जमा देने वाले शीत भरे हिम प्रदेशों, गिरि-कंदराओं, विहारों, सागर तटीय क्षेत्रों तक की गई दुरूह यात्राओं में उठाये गये कष्टों का अनुमान २१वीं सदी के इस दौर में लगा पाना असंभव है। आखिर लुप्तप्राय दुर्लभ पांडुलिपियों, पुरातन ग्रंथों, पुरातात्विक महत्व की वस्तुओं की खोज में दिन-रात अथक परिश्रम कर हजारों मील की दुर्गम क्षेत्रों की थकान भरी यात्राओं के बाद उपलब्ध उस सामग्री को खच्चरों पर लाद कर स्वदेश लाना कोई हंसी-खेल है क्या? अब जबकि संचार-क्रांति ने विश्व को एक 'ग्लोबल विलेज' बना कर सारी सूचनाओं को इंटरनेट पर उपलब्ध करा दिया है, ऐसे में उस महाउद्यमी के जीवट भरे 'पागलपन' को कैसे समझा जा सकता है। उनकी एक-एक उपलब्धि बिना जनून भरे 'पागलपन' के हासिल ही नहीं की जा सकती थी। वस्तुतः ऐसे जुनूनी व्यक्तित्व के धनी थे उद्‌भट विद्वान, भारतीय मनीषा के आधुनिक प्रतीक, अग्रणी दार्शनिक-चिंतक, इतिहासकार, लेखक, साम्यवादी विचारक, यायावर-परिव्राजक राहुल सांकृत्यायन।

'सैर कर दुनिया की गाफिल, जिन्दगानी फिर कहाँ। जिन्दगानी गर रही तो नौजवानी फिर कहाँ?' यही वह शेर था जिसने उत्तर प्रदेश के अत्यंत पिछड़े क्षेत्र आजमगढ़ के निकट रानीसराय से निजामाबाद जाने वाली सड़क पर स्थित गाँव पंदहा में जन्मे केदारनाथ पाण्डे को मिडिल की पढ़ाई के दौरान यायावरी के कभी समाप्त न होने वाले पथ पर डाल दिया था।

घोर गरीबी तथा अभावों के बीच भूमिहार ब्राह्मण परिवार में माता कुलवंती देवी और पिता गोवर्धन पाण्डे की एकमात्र संतान के रूप में ९ अप्रैल, १८९३ में इनका जन्म हुआ। इनकी बाल्यावस्था में ही माता की अकाल मृत्यु के कारण इनका लालन-पालन ननिहाल में हुआ। इनकी शिक्षा केवल ८वीं तक ही हो पाई। इसके बाद हुई पिता की मृत्यु ने इन्हें निपट अकेला कर दिया। केवल ग्यारह वर्ष की आयु में ही कर दिये गये विवाह ने इनके किशोर मन को इतना अधिक उद्वेलित कर दिया कि इन्होंने घर ही त्याग दिया और एक मठ में जाकर साधु बन गये। फिर वहाँ से भी भाग कर कलकत्ता पहुँच गये। ज्ञान-प्राप्ति की प्रबल अभीप्सा ने ही इन्हें भारत की चहुँदिस यात्राएँ करा डालीं। असंख्य साधारण अनाथ बालक घोर गरीबी, अशिक्षा और अज्ञान-अंधकार में दुनिया की भीड़ में खो जाते हैं। परन्तु प्रबल जिजीविषा, ज्ञान के प्रति सहज जिज्ञासा, अपने धर्म, संस्कृति, देश, इतिहास तथा भाषा से प्रेम, दृढ़ इच्छा-शक्ति आदि सद्‌गुण जिसके हृदय में गहराई तक पैठे हुए हों वह भला गुमनामी के अंधेरों में कैसे खो सकता था। १९०७ में निजामाबाद से मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद किशोर केदारनाथ चल पड़े अयोध्या, हरिद्वार होते हुए उत्तराखण्ड स्थित केदारनाथ-बदरीनाथ की यात्रा पर। हिमालय के उत्तुंग हिम-शिखरों के अद्‌भुत आकर्षण ने उनके मन को ऐसा बांधा कि वे जीवन-पर्यंत उससे स्वयं को विलग नहीं कर पाये।

केदारनाथ को बाल्यकाल में ही १९१२-१३ में परसा

मठ जिला छपरा के महंत के बुलावे पर उनके उत्तराधिकारी के रूप में नियुक्ति मिल गई और तब इनका नया नामकरण हुआ-रामउदार दास। इसके बाद इन्होंने भारत के सुदूर दक्षिणी प्रान्तों की यात्रा की। फिर १९१५ में आर्य मुसाफिर विद्यालय में प्रवेश लेकर आर्य समाज का प्रचारक बनने की तैयारी प्रारंभ की। इसी दौरान इन्होंने पंजाब से बंगाल तक घूम कर आर्य समाज की विचारधारा का प्रचार-प्रसार किया। वस्तुतः यायावर जीवन इन्हें अति रुचिकर लगता था। इस घुमंतू प्रवृत्ति का एक प्रमुख कारण यह था कि प्रारंभ में इन्होंने वैष्णव धर्म को गहराई तक जानने-समझने का प्रयास किया। उसके पश्चात् आर्य समाज की विचारधारा ने इन्हें बहुत आकर्षित किया। तदनंतर धर्म की गहनता और ज्ञान के प्रति सहज रुचि इन्हें बौद्ध धर्म की ओर ले गई। यह स्वयं में किसी आश्चर्य से कम नहीं कि किसी समय का वैष्णव धर्म का जिज्ञासु, आर्य समाज का प्रचारक, बौद्ध धर्म का अनुशीलनकर्ता संन्यासी अपने जीवन के अंतिम चरण में साम्यवाद का प्रवक्ता बन गया।

राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम के दौरान १९२१ में जब पूरे देश भर में असहयोग आंदोलन जोरशोर से चल रहा था, यह भी उसमें कूद पड़े। फलस्वरूप अगले वर्ष इन्हें कारावास की सजा भुगतनी पड़ी। १९२३-२५ का वह समय 'बीसवीं सदी' का रचनाकाल था। जिसमें इनके व्यक्तित्व की एक अनूठी छवि मिलती है। अब तक इनका झुकाव बौद्ध दर्शन की ओर इतना अधिक हो चुका था कि इन्होंने श्रीलंका के लिए प्रस्थान किया, जहाँ इनको बौद्ध धर्म में दीक्षित होने के साथ ही रामोदर साधु नाम मिला। वहीं १९२८ में इनके पांडित्य से प्रभावित होकर श्रीलंका के विद्यालंकार परिवेण ने 'त्रिपिटकाचार्य' तथा भागलपुर विश्वविद्यालय (बिहार) ने विद्यालंकार की मानद उपाधि प्रदान की। इसके बाद १९२९ में बौद्ध धर्म, दर्शन और संस्कृति के अतिरिक्त इतिहास तथा पुरातत्व के प्रति इनके अंतर्मन में पैठी प्रबल पिपासा इन्हें तिब्बत के दुर्गम पर्वतीय प्रदेश की यात्रा पर लेकर गई। वहाँ के शुष्क, श्रीहीन तथा बर्फीले पर्वतीय जीवन की कठिनाइयाँ इन्हें लक्ष्य से बिल्कुल भी नहीं डिगा सकीं। वहाँ अवस्थित अनेकों पुरातन बौद्ध विहारों, गोम्पाओं, कंदराओं, गुफाओं तथा मंदिरों का धार्मिक, पौराणिक, सांस्कृतिक और पुरातात्विक दृष्टिकोण से गहन अध्ययन किया।

तिब्बत की पहली यात्रा से लौटने पर १९३० में काशी की विद्वत्परिषद ने इनकी विलक्षण तार्किकता और अतुलनीय ज्ञानकोश से प्रभावित होकर इन्हें 'महापंडित' की उपाधि देकर सम्मानित किया। इसी वर्ष इन्होंने श्रीलंका में परिव्रज्या ग्रहण की तभी से यह 'राहुल' हो गये और सांकृत्य गोत्र होने से 'सांकृत्यायन' कहलाने लगे। वैसे तो तिब्बत दुनिया भर में आध्यात्मिक ज्ञान के जिज्ञासुओं, साधकों, अध्येताओं तथा जनसाधारण के लिए प्राचीन काल से ही आकर्षण का केन्द्र रहा है; परन्तु राहुल सांकृत्यायन के लिए तो वह जैसे धर्म, दर्शन, संस्कृति, इतिहास और पुरातत्व का अनमोल एवं अतुलनीय खजाना ही रहा। इसीलिए उन्होंने १९२८ के बाद १९३४, १९३६ और १९३८ में इस रहस्यपूर्ण प्रदेश की तीन और कठिन यात्राएँ कीं। तिब्बत की उनकी इन सुदीर्घ तथा कठिन यात्राओं ने भारत की उस अज्ञात, अलभ्य और विस्मृत पुरातन विरासत का उद्घाटन ही नहीं किया, जो काल-प्रवाह ने एक तरह से हमसे छीन ही ली थी, वरन् उसे सर्वसुलभ भी बनाया। कठोर तप और साधना की प्रतिरूप इन यात्राओं में वहाँ से संग्रहीत अध्ययन तथा अनुसंधान की प्रचुर सामग्री ने हिंदी भाषा और साहित्य की इतिहास सम्बंधी कई पूर्व मान्यताओं में परिवर्तन कर दिया तथा शोध और अध्ययन के नये द्वार भी खोले। भारतीय संदर्भ में उनका योगदान किसी ह्वेन सांग से कम नहीं आंका जा सकता। अपनी यायावरी में उन्होंने तिब्बत में १७-१८ हजार फीट ऊँचे हिमाच्छादित पर्वत शिखरों से लेकर एशिया के मानव-रहित रेगिस्तानों, दर्रों, गिरि-पर्वतों, कंदराओं, लगभग सभी भारतीय बौद्ध विहारों, स्तूपों, अंचलों आदि का भ्रमण तथा अध्ययन किया।

घुमक्कड़ एवं ज्ञान-पिपासु राहुल सांकृत्यायन १९३७ में तत्कालीन सोवियत रूस की यात्रा पर गये। वहाँ लेनिनग्राड में उन्होंने एक संस्कृत अध्यापक के रूप में कुछ समय तक अध्यापन किया। उस प्रवास में भारतीय-तिब्बत विभाग की सचिव लोला ऐलेना नामक महिला से उन्होंने दूसरा विवाह किया जिससे उन्हें इगोर राहुलोविच नामक पुत्र प्राप्त हुआ।

ब्रिटिश शासन के पराधीनताकाल में संपूर्ण भारतीय समाज, संस्कृति, अर्थव्यवस्था, राजनीति आदि संक्रमण के विकट दौर से गुजर रहे थे। सर्वत्र उथल-पुथल मची हुई थी, जिससे राहुल भी अछूते नहीं रह सके। उन्होंने एक कर्मयोगी के रूप में १९४० में बिहार के किसान आंदोलन में अनेक संघर्षों का नेतृत्व किया। फलस्वरूप उन्हें एक

बार पुनः जेल-यात्रा करनी पड़ी। तब उन्हें हजारीबाग कारागार में रखा गया था, जहाँ उन्होंने 'दर्शन-दिग्दर्शन' नामक ग्रंथ का प्रणयन किया। कारागार से मुक्त होकर १९४२ के भारत छोड़ो आंदोलन के बाद उन्हें तत्कालीन किसान नेता स्वामी सहजानंद सरस्वती ने साप्ताहिक पत्र 'हुंकार' का संपादक बनाया। वहाँ गैर-कांग्रेसी पत्र-पत्रिकाओं को अंग्रेजों द्वारा मोटी रकम देकर 'गुंडों से लड़िये' शीर्षक वाली विज्ञापन शृंखला छापने हेतु जोर दिये जाने से खिन्न होकर आपने त्याग-पत्र दे दिया।

धर्म, दर्शन, संस्कृति, इतिहास, पुरातत्व, भाषा, व्याकरण आदि विविध विषयों के अध्येता, चिंतक और लेखक राहुल इन पर समान रूप से गहन अधिकार रखते थे। साधु-वेशधारी परिव्राजक, वेदांत और दर्शन के प्रकांड पंडित, बहुभाषाविद्, आर्यसमाजी प्रचारक, किसान नेता तथा बौद्ध भिक्षु राहुल सांकृत्यायन का भाषा-ज्ञान तो इतना विषद था कि उनकी बराबरी करने वाला देश-विदेश में तब दुर्लभ था। उनके बारे में प्रसिद्ध है कि उनका ३६ भाषाओं पर पूरा अधिकार था। संस्कृत के प्रकांड पंडित होने के कारण वे भारत की सभी भाषाओं के ज्ञाता थे। यही नहीं पालि तथा प्राकृत का भी उन्हें बहुत अच्छा ज्ञान था। अपनी दक्षिण भारत की यात्रा के दौरान उन्होंने संस्कृत ग्रंथों, तिब्बत यात्राओं के दौरान पालि ग्रंथों तथा लाहौर व ईरान की यात्रा में अरबी भाषा सीख कर इस्लामी धर्म-ग्रंथों का विषद अध्ययन किया। उन्होंने तिब्बत और भोटानिक भाषाओं की तो अद्भुत जानकारी प्राप्त कर ली थी। मधुर स्वभाव तथा मिलनसार प्रकृति के कारण वे जहाँ भी जाते, वहाँ की बोली-भाषा सीख कर वहाँ के निवासियों में घुलमिल जाते। इससे उन्हें उनकी सभ्यता-संस्कृति, इतिहास, समाज तथा साहित्य का गूढ़ अध्ययन करने का अवसर सहज ही में प्राप्त हो जाता।

दुनिया भर में दुर्लभ उनका यह भाषा-ज्ञान उन्हें श्रीलंका, नेपाल, बर्मा, इंडोनेशिया, मलेशिया, कोरिया, जापान, चीन, मंगोलिया, मंचूरिया, सोवियत संघ, जर्मनी, फ्रांस, इंग्लेंड, पोलेंड आदि अनेक देशों की सघन यात्राओं से प्राप्त हुआ। वे जीवन-पर्यंत यायावर ही रहे। ज्ञानार्जन के उद्देश्य से १९२३ से प्रारंभ हुई उनकी विदेश यात्राओं में श्रीलंका, तिब्बत, जापान और सोवियत रूस की यात्राएँ अधिक महत्वपूर्ण हैं। उनकी यात्राएँ केवल भूगोल की यात्रा नहीं रहीं, मन की, अवचेतन की, चेतना के स्थानांतरण की भी यात्रा रही।

राहुल जी का व्यक्तित्व यात्रा-वृतांत, उपन्यास, कहानी, नाटक, निबंध, आत्मकथा, संस्मरण, जीवनी, कोष, शोधग्रंथ, इतिहास, पुरातत्व, अनुवाद-टीका, भाषा-विज्ञान, व्याकरण, लोक साहित्य आदि विभिन्न साहित्यिक विधाओं में एक सिद्धहस्त लेखक के रूप में हमारे सामने हैं। विलक्षण व्यक्तित्व तथा घुमक्कड़ स्वभाव के धनी राहुल सांकृत्यायन ऐसे मनीषी थे, जिन्होंने दार्शनिक, चिंतक, साहित्यकार, लेखक, कर्मयोगी तथा सामाजिक चेतना के संवाहक के रूप में लोगों को बहुत गहराई तक अनुप्राणित किया। इसी कारण उन्हें महापंडित, शब्द-शास्त्री, त्रिपिटकाचार्य, कोशकार, अन्वेषक, कथाकार, निबंध-लेखक, आलोचक, यायावर आदि अनेक प्रकार के विशेषणों के साथ याद किया जाता है। उन्होंने जीवन तथा साहित्य दोनों को समान रूप से जिया।

वैविध्यपूर्ण लेखकीय कौशल के महारथी राहुल जी ने हिंदी के साहित्यिक जगत को १६ जीवनियाँ, १४ पुस्तकें साहित्य तथा इतिहास, १४ संस्कृत ग्रंथों का संपादन और टीका, १३ पुस्तकें राजनीति शास्त्र एवं साम्यवाद पर, ११ यात्रा वृतांत, १० उपन्यास एवं कथा-साहित्य, १० अनुवादित ग्रंथ, ९ यात्रा-साहित्य, ९ देश-दर्शन ग्रंथ, ६ बौद्ध ग्रंथ, ३ दर्शन शास्त्र, २ कोष, १ विज्ञान सम्बंधी साहित्य से आपूरित किया। इस प्रकार उन्होंने लगभग १५० ग्रंथों और पुस्तकों की रचना की। उनकी कृतियों की सूची बहुत लंबी है। उनका यह योगदान हिंदी जगत की अमूल्य निधि है।

राहुल सांकृत्यायन ऐसे बहु-आयामी व्यक्तित्व के धनी विभूति थे जिसे शब्दों में बांधा नहीं जा सकता। उनका चिंतन, अध्ययन और लेखन इतना विषद है कि अनेकानेक शोधार्थी मिलकर भी काम करें तो भी वह पूरा नहीं हो सकता। अपने प्रवाहपूर्ण लेखकीय कौशल, शब्द-संयोजन, सूक्ष्म विवेचन तथा पैनी दृष्टि के कारण ही वे अपने अंतर्मन को सफलतापूर्वक व्यक्त कर सके। गहन ज्ञान तथा रचना-धर्मिता के बल पर ही वे एक दिन में ४०-५० पृष्ठ लिख लेते थे। लेखन तथा संभाषण कला तो जैसे उन्हें वरदानस्वरूप सुलभ हुई थी। इसी से उन्होंने अपने जीवनकाल में ही यश और कीर्ति के शिखरों को प्राप्त कर लिया था।

संपूर्ण विश्व को ही अपना घर समझने वाले राहुल जी की सारे संसार के साहित्य के प्रति अगाध श्रद्धा थी। चाहे वह किसी भी विषय से सम्बंधित क्यों न हो। उनकी

प्रगतिशीलता में अंतर्राष्ट्रीय तथा राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य को देखने का आग्रह था। वे अपनी भाषा व संस्कृति के पुजारी थे। प्रखर साम्यवादी चिंतक होने के बावजूद उनका कहना था कि ''यदि कोई 'गंगा मइया की जय' के स्थान पर 'वोल्गा की जय' बोलने के लिए कहे, तो मैं इसे पागल का प्रलाप ही कहूँगा।''

राष्ट्र के लिए एक राष्ट्र-भाषा के वे प्रबल हिमायती थे और बिना भाषा के राष्ट्र गूंगा है, ऐसा उनका मानना था। राष्ट्र-भाषा तथा जनपदीय भाषाओं के विकास को वह एक-दूसरे का पूरक मानते थे। विभिन्न भाषाओं तथा जनपदीय बोलियों का सम्मान करना तो जैसे राहुल जी का स्वभाव ही था। इस पर भी भोजपुरी उनको प्रिय थी क्योंकि वह उनकी माटी की भाषा जो थी। इसीलिए उन्होंने भोजपुरी में भी नाटकों की रचना की। उनको हिंदी से बहुत प्रेम था। इस सम्बंध में उन्होंने स्वयं कहा है-''मैंने नाम बदला, वेश-भाषा बदली, खान-पान बदला, संप्रदाय बदला लेकिन हिंदी के सम्बंध में मैंने अपने विचारों में कोई परिवर्तन नहीं किया।'' हिंदी को 'खड़ी बोली' का नाम देने वाले राहुल सांकृत्यायन का कहना था कि-'हिंन्दी, अंग्रेजी के बाद दुनिया के अधिक संख्या वाले लोगों की भाषा है। इसका साहित्य ७५०वीं ईसवी से शुरू होता है, और इसने सरहपा, कन्हापा, गोरखनाथ, चन्द्र, कबीर, जायसी, सूर, तुलसी, बिहारी, हरिश्चन्द्र जैसे कवि और लल्लूप्रसाद, प्रेमचंद जैसे लेखक दिये हैं। इसका भविष्य अत्यंत उज्ज्वल, भूत से भी अधिक प्रशस्त है। हिंदी-भाषी लोग भूत से ही नहीं आज भी सबसे अधिक प्रवास निरत जाति हैं। गयाना (दक्षिण अमेरिका), फिजी, मारीशस, दक्षिण अफ्रीका, तक लाखों की संख्या में आज भी हिंदी भाषा-भाषी फैले हुए हैं।' यही नहीं राहुल जी भाषा-परक एकता के प्रबल पक्षधर और सांप्रदायिक सद्भाव के समर्थक थे। अनेकानेक बोली-भाषाओं का ज्ञाता होने के बावजूद वे हर भाषा और उसके साहित्य को महत्व देते थे। हिंदी का प्रेमी होते हुए भी वे उर्दू तथा फारसी के साहित्यकारों को सम्मान देते थे। उनका कहना था-''सौदा और आतिश हमारे हैं। गालिब और दाग हमारे हैं। निश्चय ही यदि हम उन्हें अस्वीकृत कर देते हैं तो संसार में कहीं और उन्हें अपना कहने वाला नहीं मिलेगा।'' राहुल को हिंदी तथा हिमालय से अगाध प्रेम था। उन्होंने १९५० में नैनीताल में अपना आवास बनाया और यहीं पर उनका तीसरा विवाह कमला नामक महिला से हुआ।

राहुल सांकृत्यायन को १९५८ में साहित्य अकादमी पुरस्कार, १९६३ में भारत सरकार ने पद्मभूषण, श्रीलंका विश्वविद्यालय ने 'डी. लिट', हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग ने 'साहित्य वाचस्पति' की मानद उपाधियाँ देकर सम्मानित किया। इनके अतिरिक्त देश-विदेश की अनेक संस्थाओं ने उन्हें सम्मानित कर स्वयं को अलंकृत किया।

यह एक अद्भुत विडंबना ही कही जा सकती है कि आध्यात्मिक ज्ञान के पिपासु और सत्यान्वेषक ने अपने जीवन के उत्तरार्द्ध में 'मार्क्सवादी के रूप में मरने की इच्छा' व्यक्त की। संभवतः उन्होंने भारतीय दर्शन के धुर विरोधी तथा आयातित दृष्टिकोण—वामपंथ से अत्यधिक मानसिक जुड़ाव तथा उसी को सर्वशक्तिमान 'परब्रह्म' मान लेने के कारण ही इस भोगवादी विचार को व्यक्त किया हो। इसी 'हेंग ओवर' में उन्होंने भारतीय दर्शन, धर्म, संस्कृति, इतिहास आदि के विषय में कुछ बातें कह/लिख डालीं, जिससे उन्हें आलोचना भी झेलनी पड़ी। इसके अतिरिक्त भारत की जातीय संस्कृति सम्बंधी उनकी अवधारणा, उर्दू को हिंदी (खड़ी बोली हिंदी) से अलग मानने तथा आर्यों का 'वोल्गा से गंगा' की ओर संतरण का विचार लोगों को अप्रिय लगा। फिर भी राहुल सांकृत्यायन की उपलब्धियों का महत्व कम नहीं हो जाता। अनात्मवाद, बुद्ध का जनतंत्र में विश्वास तथा व्यक्तिगत संपत्ति का निषेध जैसे कुछ ऐसे समान कारण हैं, जिनसे आबध हो राहुल बौद्ध दर्शन तथा मार्क्सवाद दोनों को साथ लेकर चले थे। बौद्ध दर्शन तथा मार्क्स के चिंतन का संयुक्त रूप उनके अंतर्मन में रचा-बसा था और उसी के आधार पर उन्होंने भारत के नव-निर्माण का स्वप्न संजोया था। इसकी तस्दीक उनके द्वारा रचित 'बाईसवीं सदी' पुस्तक करती है।

ऐसे विलक्षण प्रतिभावान मनीषी को जीवन के अंतिम चरण १९६१ में 'स्मृति लोप' का शिकार होना पड़ा और इलाज के लिए उन्हें मास्को ले जाया गया। अंततः १४ अप्रैल, १९६३ को सत्तर वर्ष की अवस्था में दार्जिलिंग में 'अथातो ब्रह्म जिज्ञासा' मंत्र को आत्मसात करने वाला परम साधक इस नश्वर संसार को त्याग कर अनंत की यात्रा पर निकल पड़ा। इस प्रकार चिर यायावर 'भारतीय ह्वेन सांग' की यात्रा पूरी हुई।

-संजय नगर-३, बिन्दुखत्ता, पो. लालकुआँ
जिला नैनीताल-२६२४०२, मो.-९४१०५१७७९९

वह – प्रोमिला भारद्वाज

दिख जाती
आस–पास
अक्सर वह
उत्तरदायित्वों की
बेड़ियों में जकड़ी
डोलती देह,
बंधनों की
रस्सियों में कसी
बरसाती स्नेह,
अन्तहीन कर्मों के
भंवर में
डूबती–उतराती देह,
मोह–माया के
भ्रमजाल में फंसी
सत्य ढूँढ़ती रूह,
टटोलती यथार्थ।
व्यर्थ की व्यस्तताओं में
उलझती रहती वह,
न इनसे मुक्त होना चाहे
न इनमें लुप्त,
इन्हीं के मध्य
निर्लिप्त रहे
देह है वह, है स्नेह,
है समाज की रूह–
खड़ी है
प्रगति के कगार पर–
उत्तरदायित्वों, बंधनों,
अन्तहीन कर्मों,
मोह–माया,
व्यस्तताओं के पार,
झिलमिलाते संसार का
स्थिर उज्जवल सार
पाने को आतुर
तोड़कर बेड़ियाँ–
सब रस्सियाँ,
छिन्न–भिन्न कर
भ्रमजाल व भंवर
स्वयं थोपी,
अर्थहीन व्यस्तताएँ तज
स्वतंत्र होकर
टोह लेने को तत्पर,
जो है अज्ञेय
बना इसे ध्येय,
नहीं रहने को
अनभिज्ञ
प्रयासरत निरंतर,
दिख जाती
आस–पास
अक्सर वह

–औ. प्रोत्साहन अधिकारी,
जिला उद्योग केंद्र, बिलासपुर,
हि.प्र. १७४००१

कोई सूरज – हंसराज भारती

एक बादल आया
बरसा और चला गया
भर गए तालाब, पोखर
नदियाँ, नाले
बुझ गई धरती की प्यास
पर मन
प्यासा ही रह गया।
इक हवा आई
दूर उस पार से कहीं
पेड़ें से गले मिली
फूलों से बतियाई
धूप की सहेली बनी
रास्तों में महक बिखेरी
पर मन का कोना सूना ही रह गया।
एक फूल खिला
महक का ज़ोर चला
मुस्कुराहट खिली
फूल महका और मुरझा गया
पर दिल को कुछ नहीं मिला।
एक दिया जला
अंधेरे का अहंकार टूटा
रोशनी का हौसला बढ़ा
उम्मीदों की जोत जली
पर कहीं कोई सूरज
गुमनाम ही रह गया।

–३२/१, ग्राम-पो. बसंतपुर, तहसील-सरकाघाट,
जिला मण्डी-१७५०४२

दस्तक – बुद्धेश्वर प्रसाद सिंह

कोई
दे रहा है
दस्तक
दरवाजे पर
इतिहास
रो रहा है
आज के
हालात पर।
कालचक्र
चल रहा है
न जाने
कल
क्या होगा?

–ग्राम+पो. भतखोड़ा,
द्वारा बुधमा,
जिला मधेपुरा
(बिहार)-८५२११४

शैल सूत्र के प्रांगण में काव्यगोष्ठी

दिल्ली से कुहेली भट्टाचार्जी एवं कीर्ति सिंह के लालकुआँ आगमन पर स्थानीय कवियों द्वारा इन के स्वागत में एक काव्यगोष्ठी का आयोजन किया गया। मंच पर डॉ. वेद प्रकाश प्रजापति 'अंकुर', आशा शैली, कुहेली भट्टाचार्जी, कीर्ति सिंह, मंजुपाण्डे उदिता, सत्यपाल सिंह 'सजग', शाश्वत अरोरा, कुलविंदर सिंह चौहान, दयाशंकर कुशवाहा, राधेश्याम यादव आदि ने भाग लिया,

साफ–साफ कहने दो

–नरेश कुमार 'उबास'

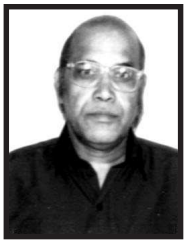

मत दो
मुझे प्रेम की दुहाई
मत रोको मुझे
साफ–साफ
कहने दो
मैं जान चुकी हूँ
तुम्हारे प्रेम का तिलिस्म
तुमने मुझे
इसके लिए छला है।
प्रेम की चादर
होती है
झक–श्वेत
किन्तु तुमने
इसे दागदार किया है।
अब समझी हूँ
मैं तुम्हारी वास्तविकता
प्रेम तुम्हारे लिए
मन बहलाने का
एक मात्र झुनझुना है

–हिमालय जैव सम्पदा प्रौद्योगिकी संस्थान,
पालमपुर-१७६०६१ (हि.प्र.)
मो. ०९४१८१९३८४२

हंसिकाएँ – डॉ. वेद प्रकाश प्रजापति अंकुर

कर्त्तव्य

• • •

बेटे–बहू ने
बीमार–बूढ़े माता–पिता
के प्रति
शब्द यूँ गढ़े
तुम्हारा समय तो
पूरा हो चुका है
अब, कब तक
खून पीते रहोगे
पड़े–पड़े।

• • •

उपयोग

• • •

धर्म एवं जाति–पाँति का
वास्तविक उपयोग
कोई उनसे सीखे
जिन्होंने पिछले कई चुनाव
इन्हीं के दमपर हैं जीते।

सेहनसिंह जीना बेस हॉस्पिटल हल्द्वानी
जिला नैनीताल-मो. ०९४१२९४३०४२

श्रीमती सुदर्शन डोगरा

प्रदूषण

• • •

प्रदूषण के
दानव को
बोलो,
कौन भगाएगा?
है क्या कोई
वीर बहादुर
जो इसे हराएगा?
भागेगा यह
दुम दबाकर तब!
जब वैचारिक
प्रदूषण
हमारे दिमागों से
हट जाएगा।

सुख–शान्ति

• • •

मैत्री, सद्भावना,
परोपकार
सच्चाई और
हरि भरोसा
इनको लो जीवन में धार
फिर सुख और आनन्द
मिलेगा
हाथ लगे न
कभी भी जीवन में
दुर्दिन की मार।

–एच.आई.जी. २९, सै.-४,
परवाणु (हि.प्र.)

नगर और गाँव

–कवि कृष्ण 'सौमित्र'

• • •

नगर की अट्टालिकाएँ
आसमां से जा अड़ी हैं
गाँव की भइया झुपड़ियाँ
जस की तस अब भी खड़ी हैं
चाँद की मिट्टी को लेकर
आ गया मानव धरा पर
गाँव में अब भी पुरानी
चाँद–सूरज की घड़ी है
खा गई सब रसमलाई
शहर की बिल्ली निगोड़ी
रिक्त बर्तन हाथ में ले
गाँव की गोरी खड़ी है

–१३/१५७, गली बम्बे वाली,
बहादुर गढ़-१२४५०७

पर्यायवाची थे संघर्ष और विष्णु प्रभाकर

-कुहेली भट्टाचार्य

विष्णु प्रभाकर एक संवेदनशील लेखक का नाम है। उनके लेखन में सामाजिक चरित्रों का प्रतिरूप प्रत्यक्ष मिलता है। उनकी कहानियों में कोई भी अपने आस-पास के चरित्रों को प्रतिफलित होते हुए देख सकता है, विष्णु प्रभाकर की कहानियों की विशेषता है कि उनके चरित्र पाठकों को अपने इर्द-गिर्द घूमते हुए महसूस होते हैं। उनकी कहानियों में कुछ ऐसा अपनापन है कि पाठक अपने-आप को उन चरित्रों में तलाशता है और ढूँढ़ भी लेता है।

शैलसूत्र का प्रेवशांक देखते हुए

विष्णु प्रभाकर का स्वयं का जीवन बहुत ही संघर्षपूर्ण रहा, यह सभी जानते हैं। यह संघर्ष उनके अपने श्रम से बनाए हुए घर के लिए था। अपनी सारी जमापूँजी लगाकर बनाया हुआ उनका घर, कुछ असामाजिक तत्वों ने हथिया लिया और प्रभारकर जी को इतना सताया कि हर तीसरे दिन उनके कोट-कचहरी के चक्कर लगते रहे। वे लाठी के सहारे अपने बेटे को साथ लेकर कोर्ट के दरवाजे खटखटाते रहे। कोई हाथ उनके सहारे के लिए आगे नहीं बढ़ा। मात्र अपने मनोबल के सहारे ही वे आगे बढ़े किन्तु इस सारी उठा-पटक के बीच भी प्रभाकर जी ने लेखनी का साथ नहीं छोड़ा। उनकी सतेज कलम ने काग़ज़ों को शक्तिशाली शब्दों के ज़रिए उभारा और लोगों तक पहुँचाया।

उद्देश्य में सफल हों

शैलसूत्र हिन्दी त्रैमासिक पत्रिका के प्रकाशन के समाचार जानकर अच्छा लगा। पत्रिका दीर्घजीवी हो। इसे आशीर्वाद देते हुए मुझे अच्छा लग रहा है। शैलसूत्र अपने उद्देश्य में सफल हो एवं साहित्य की ऊँचाइयों को स्पर्श करे। इसी आशीर्वाद के साथ-

-विष्णु प्रभाकर

महाराणा प्रताप एन्क्लेव,
पीतमपुरा, दिल्ली-110034

अपने लेखन के शुरुआत के दिनों में ही वे बंगाल के सशक्त कथाकार शरत् चन्द्र चटोपाध्याय को पढ़ पाए। शरत् जी की शक्तिशाली लेखनी का उन पर भारी प्रभाव पड़ा और उन्होंने शरद के जीवन चरित्र को लिखने के लिए घोर संघर्ष किया। विष्णु प्रभाकर की सर्वश्रेष्ठ कृति 'आवारा मसीहा' ने भारत के हर पाठक के दिल को छुआ। इस कृति ने हिन्दी जगत में एक खलबली मचा दी। उनका अनुवाद इतना सहज, सरल और स्पष्ट था कि मूल लेखक के हर भाव को पकड़ सका और उसे पाठकों तक पहुँचा सका। इतना सफल और सशक्त अनुवाद आज तक किसी अनुवादक ने नहीं किया था। पाठकों द्वारा उसे हाथों-हाथ लिए जाने के कारण विष्णु प्रभाकर का नाम और 'आवारा मसीहा' एक दूसरे की पहचान बन गए।

विष्णु प्रभाकर जी पहले अपने चरित्रों में खुद जीते थे, फिर कलम के जरिए, शब्दों की सहायता से उनको काग़ज पर उत्कीर्ण करते थे। स्वभाव से वे शान्तिप्रिय और बहुत नेक एवं नम्र मनुष्य थे। शैलसूत्र को प्रारम्भ करने से पहले हम जब उनके पास आशीर्वाद के लिए गए उस समय वे लगभग ९३ वर्ष के थे और अस्वस्थ चल रहे थे। जब हमने उनसे शैलसूत्र पत्रिका की योजना पर चर्चा की और उनके लेखकीय सहयोग माँगा तो उन्होंने हँसते हुए कहा, 'अब जो कुछ है, उसी को ले जाओ। पत्रिका निकालना तो कोई बड़ी बात नहीं उसे चलाना बड़ी बात है। बस मेरा आशीर्वाद है कि पत्रिका चलती रहे। मैं तुम्हें अधिक सहयोग शायद ही दे पाऊँ।''

मैंने पूछा, ''ऐसा क्यों कह रहे हैं?'' तो

फिर से हँसने लगे। बोले, ''मैं सोचता था कि मैं सौ साल जिऊँगा, परन्तु स्वास्थ्य के चलते ऐसा लग नहीं रहा। फिर भी ९५ तो पूरे करूँगा ही।'' और ऐसा ही हुआ। (सत्तानवे साल चली उनकी जीवन यात्रा।) इसके साथ ही उन्होंने अपनी सहायक को हमारे लिए आशीर्वचन लिखवाए।

जिस समय हम (मैं और आशा शैली) उनसे भेंट के लिए गए, तो वे अपने बिस्तर पर ही सामने एक छोटी सी चौकी रखकर बैठे हुए थे। लिखते समय, उनका हाथ कांपता था। एक लड़की उनका कहा हुआ सुन-सुनकर लिखती जाती थी। उन्होंने हमारी आवभगत की। हमने उनके लेखन और परिस्थितियों के बारे में सवाल किए तो उन्होंने उत्तर दिया कि इतने सारे साक्षात्कार छपे हैं कि अब मेरे पास गोपनीय कुछ भी नहीं रहा। हमारे हर सवाल का उत्तर वे बहुत ही शान्तिपूर्वक दे रहे थे। फिर देर तक उनसे बात-चीत होती रही। हमने पूछा कि आपका खर्चा कैसे चलता है तो उनका उत्तर था, ''बस चल जाता है।''

मैं सोचने लगती हूँ, 'लेखकों को अपना पूरा जीवन समर्पित करने के बाद आखिरी समय जीवन ढोने की भी सामर्थ्य नहीं रहती। क्या हमारे समाज का इनके लिए कोई उत्तर दायित्व नहीं है? पूरी जिन्दगी जो इन्सान समाज सुधार के कार्यों में लगा रहा हो, और जीवन संध्या में भी अपने गुजारे के बारे में यह कहे, 'बस हो जाता है' समाज के लिए लज्जा की बात है।

-ए-१७, यू.जी.एफ., गली नं.-८,
द्वारका मोड़, नई दिल्ली-५९ मो. ०९७२८९६८९४८

दोहा ग़ज़ल

डॉ. अशोक गुलशन

तुम बैठे उस पार हो, मैं बैठा इस पार
हम दोनों के बीच में, पानी की दीवार

कैसे सम्भव हो मिलन, कैसे हो अब साथ
टूटी-फूटी नाव है, हाथ नहीं पतवार

तुम हो अपने गाँव में, मैं हूँ अपने गाँव
दोनो यूँ बिछुड़े हुए, जैसे हों दो तार

साजन की रह-रह मुझे, जब आती है याद
मुझको तब भाता नहीं, कोई भी शृंगार

तुम भी हो ग़म से घिरे, मैं भी हूँ बेहाल
तुम भी हो लाचार अब, 'गुलशन' भी लाचार

★

-कानूनगो पुरा (उ.) बहराइच (उ.प्र.)
मो. ९४५०४२७०१९

नवगीत -पं. गिरिमोहन गुरु 'नगर श्री'

छा गया आतंक चारों ओर
तीखी धूप का...
एक अंधड़ ने किया दंगा
हुए सब वृक्ष नंगे
फूल सब ज्वर ग्रस्त केवल
शूल चंगे
हो गया झुलसा हुआ चेहरा
सुकोमल धूप का...
तमतमाए एक अफसर का
मुखौटा ओढ़ सूरज
अधीनस्थों को बनाता जा
रहा तपती चरण रज
तिलमिलाता जल विकल हो-हो
सरित सर कूप का...
छा गया आतंक चारों ओर
तीखी धूप का...

-श्री सेवाश्रम नर्मदा मंदिरम्, हाउसिंग
बोर्ड कालोनी, होशंगाबाद-४६१००१
मो.०९४२५१८९०४२

नासा वैज्ञानिक द्वारा जारी एक रिपोर्ट के अनुसार अमेरिका ६टी और सातवीं पीढ़ी के सुपर कम्प्यूटर संस्कृत भाषा पर आधारित बना रहा है। जिससे सुपर कम्प्यूटर अपनी अधिकतम सीमा तक उपयोग किया जा सके। परियोजना की समय सीमा २०२५ (६टी पीढ़ी के लिए) और २०३४ (७वीं पीढ़ी के लिए) है, इसके बाद दुनिया भर में संस्कृत सीखने के लिए एक भाषा क्रान्ति होगी।

भारतीयता के आवारा मसीहा: विष्णु प्रभाकर –डॉ. पशुपतिनाथ उपाध्याय

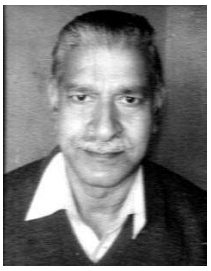

गाँधीवादी विचारधारा के पोषक, तटस्थतावादी रुचि-रुझान के साहित्य-सर्जक, तलस्पर्शी, और मर्मस्पर्शी समन्वित तत्वान्वेषी-दृष्टि के समीक्षक, वरिष्ठ कथा शिल्पी, मानवीय मूल्यों और जीवनादर्शों के उपासक, साधक एवं बहुआयामी साहित्यिक व्यक्तित्व के धनी विष्णु प्रभाकर ने हिन्दी साहित्य में न केवल क्षेत्र विस्तार किया है बल्कि मानक कृतियों के माध्यम से एक नव्य कीर्तिमान भी स्थापित किया है। उपन्यासकार के रूप में 'अर्द्धनारीश्वर', कोई तो, निशिकान्त, तट के बंधन आदि कृतियों के माध्यम से उपन्यास विधा को समृद्ध करने में विष्णु प्रभाकर की अहम् भूमिका रही है। कहानी विधा के अन्तर्गत 'दस प्रतिनिधि कहानियाँ' एवं कौन जीता-कौन हारा, का अपना विशिष्ट स्थान है। नाटक विधा पर भी उन्होंने लेखनी चलाई जिसका साक्ष्य हैं, सत्ता के आर-पार, गंधार की भिक्षुणी, एवं केरल की क्रान्तिकारी कृतियाँ। जनसमाज और संस्कृति उनके सामीक्षक रूप को (प्रतिनिधित्व) प्रतिबिम्बित करने वाली समीक्षात्मक कृति है। जबकि ज्योतिपुंज हिमालय तथा हँसते निर्झर-दहकती भट्ठी, यात्रावृत्तान्त विधा का प्रतिनिधित्व करने में सक्षम सिद्ध हुई हैं। अमर शहीद भगतसिंह कृति में जीवन-चरित का अनुशीलन है, जो जीवनी विधा का प्रमाणिक जीवन्त दस्तावेज है। 'राष्ट्रीय एकता और हिन्दी' भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से रूपायित कृति है, जिसमें लेखकीय रचनाधर्मिता का अनुपालन तथा हिन्दी भाषा के प्रति लगाव की भावसंपदा विद्यमान है।

विष्णु प्रभाकर संस्मरण विधा को भी समृद्ध बनाने में सहयोगी सिद्ध हुए। जिनकी चरम और परम परिणति 'हमसफर मिलते रहे' में देखने को मिली है, जो तेईस संस्मरणात्मक यात्रा विवरणों का संकलन और संग्रह है। बंगला के सुप्रसिद्ध कथाशिल्पी प्रभात कुमार मुखोपाध्याय की कहानी 'देवी' से अनुप्रेरित होकर 'बंदिनी' नाटक की रचना भी विष्णु प्रभाकर ने की है जो वास्तव में मंचन की दृष्टि से विशेष आकर्षक है। भारतीयता के मसीहा विष्णु प्रभाकर ने बालकों के लिए भी चौदह कहानियों का संकलन 'खोया हुआ रतन' शीर्षक से प्रकाशित कर भारतीय संस्कृति के प्रति उदारतावादी दृष्टि का परिचय दिया है, जिसमें जीवन मूल्यों और संस्कारों की एकसूत्रता दृष्टव्य है।

विष्णु प्रभाकर की २००६ में आलेख प्रकाशन से प्रकाशित 'एक कहानी का जन्म' कहानी संग्रह है, जिसमें सोलह प्रेम कहानियों का कथ्यात्मक विविधता का दिग्दर्शन है। कहानी कला की दृष्टि से समसामयिकता बोध के धरातल पर ये कहानियाँ खरी उतरती हैं। मानवीयता की तलाश करने वाली साम्प्रदायिकता विरोधी बीस कहानियों का संग्रह भी 'मेरा वतन' नामक शीर्षक से विष्णु प्रभाकर का प्रकाशित हुआ है जिसमें पाठकों के अंतर्मन की गहराइयों को स्पर्श करने की अद्‌भुत क्षमता-दक्षता है। यथार्थवादी फलक पर लिखी हुई ये कहानियाँ जीवन के विविध पक्षों को उजागर करने में समर्थ हैं।

विष्णु प्रभाकर से मेरा प्रथम साक्षात्कार नई दिल्ली में प्रेमचन्द जन्मशताब्दी समारोह के समय १९८४ ई. में हुआ था। संयोग से मैं भी डॉ. नागेंद्र के यहाँ ठहरा हुआ था और उन्हीं के साथ समारोह में सम्मिलित हुआ था। दैवगति से पूर्व प्रधानमंत्री स्व. श्रीमती इंदिरागाँधी की हत्या भी उसी दिन हुई थी जिसके परिणाम स्वरूप समारोह स्थगित हो गया। मुझे मेरी कृति 'आलोचक डॉ. नागेंद्र' पर डॉ. कुमार विमल से 'दो शब्द' लिखवाना था, जो उस दिन बिहार हाउस में ठहरे हुए थे, इसलिए विष्णु प्रभाकर जी से औपचारिक बात-चीत के पश्चात् बिहार हाउस जाना पड़ा। श्रीमती गाँधी की हत्या से सभी स्तब्ध, दुखी और क्षुब्ध थे। इससे साहित्य जगत में अफरा-तफरी मच गई। किसी तरह 'दो शब्द'

लिखने की औपचारिकता भारी मन से पूरी हुई तथा विष्णु प्रभाकर जी से पत्राचार के माध्यम से सम्पर्क हुआ और यह क्रम चलता रहा। एक बार मैंने अपनी कृति 'अद्यतन काव्य की प्रवृत्तियाँ' पर समीक्षा लिखने का अनुरोध विष्णु जी से किया तो उन्होंने पोस्टकार्ड पर यह लिखकर सूचित किया कि 'मैं सृजनात्मक साहित्य लिखता हूँ। समीक्षा किसी अन्य साहित्यकार से लिखवा लें।'

आर्य समाज संस्कार से सम्पन्न और महात्मा गाँधी से प्रभावित विष्णु प्रभाकर सादा जीवन उच्च-विचार के पुरोधा थे। सहजता, सरलता, सौम्यता की प्रतिमूर्ति विष्णु प्रभाकर घटकवाद, वर्गवाद आदि से कोसों दूर रहे। जीवन का मुख्य उद्देश्य वे 'तलाश जारी रखना' ही समझते थे, क्योंकि धार्मिक कट्टरता के वे परम विरोधी थे और समाज में उन्नति होती रहे- इसी को वे साहित्यिक धर्म समझकर लिखते थे। अजातशत्रु के रूप में अपने को स्थापित करने वाले साहित्यकार विष्णु प्रभाकर सम्प्रति साहित्यकारों में ९७ वर्ष पूर्ण कर इस संसार से विदा हुए, जिनके दीर्घायु-दीर्घजीवी होने का रहस्य मात्र सादगी, आस्तिकता और सात्विक वृत्ति रही है।

चिकित्सा विज्ञान को शरीर दान देने वाले, सतत लेखनी चलाने वाले, जीवन के अन्तिम दिनों तक पत्र-पत्रिकाओं में पत्र-लेखन के माध्यम से जीवंतता प्रमाणित करने वाले निराभिमानी, स्वाभिमानी एवं अद्यतन परिवेश के दधीचि विष्णु प्रभाकर ने अंतिम साँस तक साहित्य सर्जना की है। महामहिम राष्ट्रपति डॉ. अब्दुल कलाम जी के कार्यकाल में पुत्र के साथ सम्मान समारोह में प्रवेश न मिलने पर पुरस्कार लेने से इनकार कर देने वाले विष्णु प्रभाकर स्वाभिमानी मिजाज़ के खुशदिल साहित्यकार थे। यही कारण था कि राष्ट्रपति को दुबारा चिट्ठी लिखनी पड़ी और विष्णु जी पुनः पुरस्कार लेने गए।

शरच्चन्द्र, प्रेमचन्द्र एवं प्रसाद तथा जैनेंद्र से प्रभावित विष्णु प्रभाकर पाश्चात्य समीक्षकों में 'हार्डी, टाल्सटाय, चेख़व एवं गोर्की से भी प्रभावित थे। अपने को मूलतः कहानीकार मानने वाले विष्णु प्रभाकर 'आवारा मसीहा' के लिए जाने-पहचाने जाते हैं तथा लोकप्रिय रहे क्योंकि उन्होंने जीवन का सर्वाधिक समय आवारा मसीहा की सर्जना में लगाया था।

साहित्यिक साक्षात्कार में विष्णु प्रभाकर ने अपनी रचनाओं में कहानियों में 'ममता का विष', 'धरती अब भी घूम रही है', 'जिन्दगी एक रिहर्सल', 'एक और कुंती', शरीर से परे', 'राय बहादुर की मौत', 'तलाश' आदि को श्रेष्ठ कहानियों के रूप में स्वीकार किया है तथा चर्चित उपन्यास 'कोई तो' को ही मान्यता दी है। नाटकों में 'अब और नहीं' को अच्छा नाटक कहकर पुकारा है। राष्ट्र में बढ़ती हुई हिंसा का समाधान उन्होंने मात्र 'अहं का विसर्जन' ही सुझाया है क्योंकि कुशल नेतृत्व का अभाव रहा है। १९३४ ई. से सतत साहित्य सर्जना करने वाले साहित्यकार विष्णु प्रभाकर ७५ वर्ष तक लगातार सरस्वती के मन्दिर के पुजारी रहे, साधक रहे, आराधक रहे। वे कभी भी मूर्तिपूजा के समर्थक नहीं रहे। कर्म ही उनकी पूजा थी। साहित्य सर्जना ही आराधना थी। नारी के प्रति विविध दृष्टिकोण रखते हुए भी उन्होंने चार वर्गों को स्वीकारा है, जिसमें १-संस्कार से पीड़ित नारी, २-स्वप्न देखने वाली नारी, ३-संघर्षशील नारी तथा ४-अर्धनारीश्वर हैं। यही कारण है कि उन्होंने 'अर्धनारीश्वर' उपन्यास में नारी के चौथे रूप की स्थापना की है। २१ जून १९१२ ई. को जन्मे विष्णु प्रभाकर ११ अप्रैल २००९ को हमसे विदा हो गए। सम्प्रति हिन्दी जगत उनके द्वारा स्थापित जीवनादर्शों एवं मूल्यों को जीवन्तता प्रदान करने हेतु पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से अपनी भावांजलि, श्रद्धांजलि दे रहा है, ताकि साहित्यिक-सांस्कृतिक अनुष्ठान की पूर्णाहुति सम्पन्न हो सके।

रूढ़िगत परम्पराओं, मान्यताओं, अवधारणाओं, एवं विद्रूपताओं के प्रति विद्रोही स्वर ध्वनित करने वाले साहित्य-सर्जक विष्णु प्रभाकर रहे हैं जिनकी साक्ष्य हैं उनकी कहानियाँ एवं औपन्यासिक कृतियाँ।

शेष पृष्ठ-१५ पर

पद्म विभूषणः विष्णु प्रभाकर

–डॉ. बीना लोहानी

विष्णु प्रभाकर का जन्म २१ जून १९१२ को उत्तर प्रदेश के मुजफ्फर नगर जिले में हुआ। उनके पिता दुर्गा प्रसाद धार्मिक विचारों वाले व्यक्ति थे और उनकी माता महादेवी, पढ़ी-लिखी महिला थीं। उन्होंने अपने समय में पर्दा प्रथा का विरोध किया था। प्रभाकर जी की पत्नी का नाम सुशीला था। विष्णु प्रभाकर की आरम्भिक शिक्षा मीरापुर में हुई थी। बाद में वे अपने मामा के घर हिसार चले गए जो तब पंजाब का हिस्सा था। घर की हालत ठीक नहीं होने के चलते वे आगे की पढ़ाई ठीक से नहीं कर पाए और गृहस्थी चलाने के लिए उन्हें नौकरी करनी पड़ी।

चतुर्थ वर्गीय कर्मचारी के तौर पर काम करते समय उन्हें प्रतिमाह १८ रुपए मिलते थे। मेधावी और लगनशील विष्णु ने पढ़ाई जारी रखी और हिन्दी में प्रभाकर व हिन्दी भूषण की उपाधि के साथ ही संस्कृत में प्रज्ञा और अंग्रेजी में बी.ए. की डिग्री प्राप्त की। विष्णु प्रभाकर पर महात्मा गाँधी के दर्शन और सिद्धांतों का गहरा असर पड़ा। इसके चलते उनका रुझान कांग्रेस की तरफ हुआ और स्वतंत्रता संग्राम के महासमर में उन्होंने अपनी लेखनी का भी एक उद्देश्य बना लिया जो आज़ादी के लिए सतत संघर्षरत रही।

-पृष्ठ 13 का शेषांश

वस्तुतः यही साहित्यिक कर्म है और यही साहित्यिक धर्म भी, जिसका मर्म सर्जक, संवेदनशील एवं सात्विक वृत्ति का साहित्यकार ही समझता है। विष्णु प्रभाकर ने इसी को अंगीकार किया और उसी स्वर्णिम सिद्धांत को अपनी कृतियों के द्वारा व्यवहारिक धरातल प्रदान करने की पुरजोर कोशिश की।

-८/२९ए, शिवपुरी, अलीगढ़२०२००१
मो. ९८९७४५२४३१

अपने दौर के लेखकों में वे प्रेमचन्द, यशपाल, जैनेंद्र और अज्ञेय जैसे महारथियों के सहयात्री रहे लेकिन रचना के क्षेत्र में उनकी एक अलग पहचान रही।

विष्णु प्रभाकर ने पहला नाटक 'हत्या के बाद' लिखा। उन्होंने हिसार की नाटक मंडली में भी काम किया और बाद के दिनों में लेखन को ही उन्होंने अपनी जीविका बना लिया। आज़ादी के बाद वे नई दिल्ली आ गए और सितम्बर १९५५ में आकाशवाणी में नाट्य निदेशक के तौर पर नियुक्त हो गए जहाँ उन्होंने १९५७ तक काम किया। वर्ष २००५ में वे तब सुर्खियों में आए जब राष्ट्रपति भवन में कथित दुर्व्यवहार के विरोध स्वरूप उन्होंने पद्म भूषण की उपाधि लौटाने की घोषणा की।

उनका आरम्भिक नाम विष्णु दयाल था। एक सम्पादक ने उन्हें प्रभाकर का उपनाम रखने की सलाह दी। विष्णु प्रभाकर ने अपनी लेखनी से हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया। उन्होंने साहित्य की सभी विधाओं में अपनी लेखनी चलाई। १९३१ में हिन्दी मिलाप में पहली कहानी 'दीवाली के दिन' छपने के साथ ही उनके लेखन का जो सिलसिला शुरू हुआ वह उनके जीवनकाल तक निरंतर चलता रहा। नाथूराम शर्मा 'प्रेम' के कहने से वे शरत चन्द्र की जीवनी 'आवारा मसीहा' लिखने के लिए प्रेरित हुए, जिसके लिए वे शरत् को जानने के लगभग सभी स्रोतों/जगहों तक गए। उनके साहित्य को जानने/समझने के लिए उन्होंने बंगला सीखी। जब यह जीवनी छपकर आई तो साहित्य जगत में विष्णु प्रभाकर के नाम की धूम मच गई। कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी, संस्मरण, बाल साहित्य आदि सभी विधाओं में प्रचुर साहित्य लिखने के बावजूद 'आवारा मसीहा' उनकी पहचान का पर्याय बन गई। बाद में अर्धनारीश्वर पर उन्हें बेशक साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला हो किन्तु 'आवारा मसीहा' ने साहित्य में उनका मुकाम अलग ही रखा। जीवन के अन्तिम क्षण तक सक्रिय रहकर वे ११ अप्रैल २००९ को हमसे विदा हो गए।

-जू. हा.स्कूल कठघरिया, हल्द्वानी

मानवतावादी तथा गाँधीवादी विचारकः विष्णु प्रभाकर

-बिमला जोशी

हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल में अनेक कवियों एवं लेखकों ने अपनी लेखनी से हिन्दी साहित्य को गौरवान्वित किया है, जिनमें एक नाम विष्णु दयाल यानि विष्णु प्रभाकर जी का नाम बड़े सम्मान से लिया जाता है, जिन्होंने गद्य साहित्य में अपना उत्कृष्ट योगदान दिया है। साहित्य जगत के इस सुप्रसिद्ध लेखक ने अपने विचारों से एक अलग ज्योति जलाई, जिसका प्रकाश नई पीढ़ी के साहित्यकारों के लिए प्रकाश स्तम्भ का कार्य कर रहा है।

विष्णु प्रभाकर जी का जन्म २१ जून १९१२ को उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर जिले के मीरापुर गाँव में हुआ। उनके पिता दुर्गा प्रसाद धार्मिक विचारों वाले व्यक्ति थे। इनकी माता श्रीमती महादेवी सुशिक्षित एवं प्रगतिवादी महिला थीं, इसीलिए वे उस घोर पुरातन विचारों वाले समय में भी पर्दा प्रथा का विरोध कर पाईं। विष्णु प्रभाकर की पत्नी सुशीला से उनके दो बेटे एवं दो बेटियाँ हुईं। प्राम्भिक शिक्षा मीरापुर में ग्रहण करने के बाद ये मामा के घर हिसार चले गए। घर की आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण इन्हें चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी की नौकरी करनी पड़ी, किन्तु इन्होंने अपनी शिक्षा का क्रम जारी रखा। और प्रभाकर एवं हिन्दी भूषण की उपाधि के साथ संस्कृत एवं बी.ए. की डिग्री भी अर्जित की।

१९३१ में हिन्दी मिलाप में उनकी पहली कहानी 'दीवाली के दिन' प्रकाशित हुई। इसके बाद उनका लेखन निर्बाध चलता रहा। सर्व विदित है कि विष्णु प्रभाकर पर महात्मा गाँधी के जीवन-दर्शन और उनके सिद्धांतों का गहरा प्रभाव था, न केवल प्रभाव अपितु उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम के महासमर में इन सिद्धांतों के अनुसार ही लेखन को अपना उद्देश्य ही बना लिया था। वे यशपाल, प्रेमचन्द, जैनेंद्र एवं अज्ञेय जैसे अपने समकालीनों के साथी सहयोगी रहते हुए भी अपनी अलग राह बनाकर उस पर चलते रहे।

विष्णु प्रभाकर जी ने पहला नाटक 'हत्या के बाद' लिखा और हिसार में एक नाटक मंडली में काम भी किया। इसके बाद तो उन्होंने लेखन को अपनी आजीविका ही बना लिया। देश के स्वतंत्र होने के बाद वे दिल्ली आ गए जहाँ उन्होंने १९५५ से १९५७ तक आकाशवाणी में नाट्य निदेशक के पद पर कार्य किया। विष्णु प्रभाकर जी ने अपनी 'ढलती रात, स्वप्नमयी, अर्धनारीश्वर, धरती अब भी घूम रही है, क्षमादान, दो मित्र, पाप का घड़ा, होरी' आदि उपन्यास, 'हत्या के बाद, नव प्रभात, डॉक्टर, प्रकाश और परछाइयाँ, बारह एकांकी, अशोक, अब और नहीं, टूटते परिवेश', तथा कहानी संग्रह में 'संघर्ष, मेरा वतन, खिलौने, आदि और अंत' लिखे।

अपकी आत्मकथा 'पंखहीन, यात्रा वृत्तांत, ज्योतिपुंज, हिमालय, यमुना-गंगा, नैहर में आदि हैं। इन रचनाओं में मानव की रुचियों एवं भावनाओं का गहन अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

विष्णु प्रभाकर जी आदर्शवादी विचारक रहे हैं। उन्होंने अपने कहानी, एकांकी तथा नाटकों में घृणा-द्वेष आदि मानवोचित विकारों पर सहानुभूति, संवेदना आदि सद्वृत्तियों की विजय दिखाई है। मानव आत्मा के सौंदर्य का उद्घाटन इनकी कला की प्रमुख विशेषता है। इसके अतिरिक्त इनके कई एकांकियों में भारतीय राजनैतिक हलचलों तथा राष्ट्रीय क्रान्ति का सफल चित्रण हुआ है। अर्धनारीश्वर उपन्यास के लिए उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार से नवाज़ा गया।

विष्णु प्रभाकर जी ने शरतचन्द्र की जीवनी

'आवारा मसीहा' लिखने के लिए ही बंगला भाषा सीखी एवं शरत्चन्द्र के जीवन से आमना-सामना करने के लिए वे उन सभी स्थानों एवं स्रोतों तक गए जहाँ से उन्हें कुछ भी सूचना उपलब्ध हो सकती थी। साहित्य की सभी विधाओं में प्रचुर मात्रा में लिखने के बाद भी उन्हें 'आवारा मसीहा' ने एक अलग ही पहचान दी। यह जीवनी विष्णु जी के धैर्य और लेखकीय साहस का प्रतीक है। विष्णु प्रभाकर ने शरद चन्द्र के रहस्यमय और उलझे हुए जीवन की गुत्थी सुलझाने के साथ ही उनके किरदारों के स्रोत एवं रचना प्रक्रिया को टटोलने की दुष्कर चुनौती को भी स्वीकारा और प्रमाणिकता के साथ उसका निर्वहन भी किया। इसके लिए उन्होंने बंगाल, बिहार और बर्मा के बीच फैली कथा तथा देश में न जाने कहाँ-कहाँ बिखरे सूत्रों को जोड़ने के लिए गहन यात्राएँ कीं। किताबों व पत्रिकाओं को खंगालने के साथ ही अनगिनत लोगों से मिलकर शरतचन्द्र का जीवन, व उनके रचनाकर्म और चरित्रों को पहचानने का गम्भीर उद्यम किया, तब उन्हें १९ साल बाद 'आवारा मसीहा' की उपलब्धि हासिल हुई।

'आवारा मसीहा' लिखने का उनका उद्देश्य वे शरदचन्द्र को समाज में उजागर करना चाहते थे। पाठकों ने भी उनकी इस महान कृति को हाथों-हाथ लिया और भारत सरकार तथा साहित्य अकादमी ने भी उन्हें सिर-माथे रखा। यह पुस्तक हिन्दी साहित्य की घटती-गिरती पठनीयता के लिए मानो एक संजीवनी थी।

विभाजन के बाद 'धरती अब घूम रही है' कहानी में उन्होंने एक गरीब ठेले वाले को म्यूनिसिपैल्टी के कारिन्दों द्वारा गिरफ्तार होते हुए चित्रित किया है। 'मामले का फैसला करने वाले जज को बतौर रिश्वत लड़कियाँ पसंद हैं जानकर ठेले वाले का ग्यारह साल का बेटा अपनी नौ साल की मासूम बहन को लेकर भरी महफिल में पहुँच जाता है।' चेतना को कहीं बहुत भीतर तक अवसन्न कर देने वाली इस कहानी में विष्णु प्रभाकर सवाल करते हैं, 'इस घटना के बाद हैरत है, धरती अब भी घूम रही है?'

विष्णु प्रभाकर को अनेक सम्मान, पद्मभूषण, ज्ञानपीठ मूर्तिदेवी सम्मान, साहित्य अकादमी पुरस्कार, सोवियत लैण्ड नेहरू अवार्ड आदि से सम्मानित किया गया। विष्णु प्रभाकर वर्ष २००५ में सुर्खियों में आए जब राष्ट्रपति भवन में कथित दुर्व्यवहार के विरोध में उन्होंने पद्म-भूषण की उपाधि लौटाने की घोषणा कर दी।

विष्णु प्रभाकर जी साहित्य के क्षेत्र में अग्रिम पंक्ति के रचनाकार के साथ-साथ मानवतावाद के पर्याय भी बन गए। ११ अप्रैल २००९ को इस मीन विभूति ने अंतिम साँस ली। उन्होंने अपनी वसीयत करते समय अपने समस्त अंग चिकित्सा विज्ञान को दान करने की इच्छा ज़ाहिर की थी इसीलिए उनका अंतिम संस्कार नहीं किया गया। उनके पार्थिव शरीर को उनकी इच्छानुसार चिकित्सा भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान को सौंप दिया गया।

-प्रधानाध्यापिका,
रा.प्रा. वि. हल्दूपोखरा नायक, हल्द्वानी

घर का सपना– जया 'नर्गिस'

हर बार जब
सामान सहित उगल दिया है मुझे
मकान ने
तब बहुत जी किया
काश मैं होती इक पंछी
चाहे जिस पेड़ की शाख़ पर बनाती बसेरा
दर–ब–दर नहीं होता
घर का सपना मेरा
मेरी चहक देती मेरा पता
खाना–ब–दोश ज़िन्दगी
सज़ा नहीं, लुत्फ़ देती
दुनिया से बड़ा होता मेरा वजूद
ख़ैर इसके बावजूद
कि मैं
चिड़िया नहीं, चिड़िया की रूह तो है
मुझमें मौजूद।

इलैक्ट्रानिक मीडिया, एन.आई. टी.टी.टी. आर.
श्यामला हिल्स, भोपाल। मो. ०९८२७६२४२१२

मात्र पठनीय नाटक को नाटक कहना सही नहीं होगा।

-विष्णु प्रभाकर के नाटकों पर राजेंद्र परदेसी की बातचीत

●कहा जाता है कि कुशल नाटककार अच्छा कहानीकार नहीं होता और न अच्छा कहानीकार अच्छा नाटककार, ऐसा क्यों? आप तो दोनों ही हैं।

❑जहाँ तक मेरा प्रश्न है मैं कहानीकार पहले था, नाटककार बाद में बना। मुझे नाटककार बनाने में रेडियो का बहुत बड़ा हाथ रहा, इसीलिए मेरे नाटकों पर ध्वनि नाट्यकला का बहुत प्रभाव है। नाटक भी सबसे पहले कहानी है, लेकिन मंच से कही गई कहानी। इसलिए कहानीकार नाटककार व नाटककार कहानीकार बन सकना असम्भव नहीं। हाँ दोनों की भाषा में बहुत अंतर है, अगर कोई व्यक्ति भाषा के इस अंतर को नहीं समझ पाता तो एक विधा से दूसरी विधा में आना कठिन हो जाता है। यह प्रश्न अब भी सार्थक है कि क्या मैं दोनों विधाओं में सफल और सार्थक रचनाएँ कर सका हूँ? लेकिन ये सब मेरे कहने की बातें नहीं हैं। समीक्षक जानें।

●नाटककार के लिए मंच शिल्पी होना आवश्यक है। क्या आप मंचशिल्प में भी दखल रखते हैं?

❑हाँ! नाटककार के लिए मंचशिल्पी होना आवश्यक है। बहुत कम लोग जानते हैं कि मैं अपने प्रारम्भिक जीवन में अभिनेता भी रहा हूँ एक ड्रामेटिक कम्पनी भी चलाई है, लेकिन यह सब पारसी थियेटर युग की कहानी है। उससे मेरा बहुत गहरा सम्बंध नहीं रहा। हाँ आकाशवाणी के नाटक निर्देशित किए हैं। दूरदर्शन पर भी मेरे नाटक होते रहते हैं। वहाँ भी मैं खड़ा हूँ।

●हिन्दी नाटकों के सम्बंध में सामान्य धारणा है कि उनका मंच से कोई सम्बंध नहीं जुड़ पाता। क्या आपने उन्हें मंच के निकट लाने की चेष्टा की है?

❑एक युग था जब ये धारणा सच थी। प्रसाद के नाटकों को लेकर बहुत बहस हुई है। लेकिन आज ऐसा नहीं है। हिन्दी नाटक सक्रिय रूप से मंच से

जुड़ा है। भारतेंदु युग में भी जुड़ा था, उन्होंने स्वयं भी अपने नाटकों में अभिनय किया था। वह परम्परा बनी रहती तो हिन्दी नाटक आज और भी सशक्त होता। मंच शिल्प की आवश्यकताओं के अनुरूप परिवर्तन करके प्रसाद के नाटक सफलतापूर्वक मंचित किए जा सकते हैं व किए भी गए हैं। इस दृष्टि से शेक्सपीयर के नाटकों में भी परिवर्तन होता रहता है। हाँ नाटक की आत्मा सुरक्षित रहनी चाहिए। कुशल निर्देशक ऐसा कर सकता है और किया भी गया है।

●नाटक में यथार्थ-चित्रण की मर्यादा पर आप किस सीमा तक अंकुश लगाना चाहते हैं और आपकी दृष्टि में अश्लीलता की क्या परिभाषा है?

❑अश्लीलता की परिभाषा और यथार्थ-चित्रण को लेकर अनादिकाल से बहस चलती रही है, चलती रहेगी, मानवीय मूल्य बदलते रहे हैं बदलते रहेंगे। मेरे दादा के समय में नारी अपने शरीर को पूर्णतः ढक कर ही घर से बाहर आ सकती थी। आज नारी ऐसे किसी अंकुश को स्वीकार नहीं करती। हाँ सीमा की मर्यादा अभी भी बनी हुई है। यह मेरे बाद की पीढ़ी के लिए अभी दकियानूसी मानी जाती है। वस्तुतः अश्लीलता वस्तु में इतनी नहीं होती जितनी देखने वाले की दृष्टि में। वह दृष्टि तत्कालीन मूल्यों से निर्मित होती है। अलग-अलग देश, अलग-अलग समाज मर्यादा की अलग-अलग परिभाषा करते हैं।

●नाटक और फिल्म दोनों के मूल्यवान अंतर को स्वीकारते हुए क्या आप दोनों को एक-दूसरे के निकट लाना चाहेंगे?

❑नाटक और फिल्म ही क्यों, मंच नाटक, ध्वनि-नाटक, दूरदर्शन-नाटक और सिने-नाटक चारों में मूलभूत अन्तर है। तकनीकी अन्तर भी और भाषाई अन्तर भी। कहानी की समानता होते हुए भी वे स्वतंत्र विधाएँ हैं। उन्हें पास लाने की अनिवार्यता क्यों? यों प्रयोग होते रहते हैं।

●सम्प्रति नाटक की पाँच विधायें स्वीकार की जाती हैं। पहली जो केवल पठनीय है, दूसरी

मंचीय, तीसरी फिल्मी, चौथी रेडियो नाटक और पाँचवीं टेलीविजन। इन सब विधाओं की लक्ष्मण रेखा पर अपने विचार कृपया दें।

❑नाटक की पाँच विधाओं में से चार पर मैंने अभी चर्चा की है। मात्र पठनीय नाटक को नाटक कहना बहुत सही नहीं होगा, चूँकि नाटक मंच से अलग कुछ नहीं है मात्र संवाद किसी रचना को नाटक नहीं बना देते। इससे अच्छा है कि हम कहानी ही लिखें। शेष चारों विधाओं पर विस्तार से चर्चा यहाँ सम्भव नहीं। उनकी अपनी-अपनी विशेषतायें हैं और अपनी-अपनी सीमायें।

●नाटकों के गेय तत्व पर अपने विचार देते हुए उसके लिए उपयुक्त स्थान का संकेत करें।

❑नाट्यकला सामूहिक कला का रूप है। शब्द के अतिरिक्त संगीत, मूर्तिकला, अभिनय सभी को मिलाकर नाटक बनता है। संगीत का नाना रूपों में प्रयोग नाटक में हो सकता है। एक समय था जब किसी नाटक में गीत अनिवार्य थे। जैसा आज सिनेमा में देखा जा सकता है। मराठी रंगमंच पर गीत अभी भी पूरी तरह समाप्त नहीं हुए हैं लेकिन प्रवृत्ति आज गीतों के बहिष्कार की है। माना जाता है कि गीत अभिनय की सघनता कम करते हैं। संगीत रूपक अपने आप में स्वतंत्र विधा है। नृत्य नाटक और गीत नाट्य में संगीत का प्रयोग होता है लेकिन दूसरे प्रकार के नाटकों में तभी संगीत का प्रयोग उपयुक्त माना जाता है जब वह कथा से अनिवार्य रूप से जुड़ा हो, अर्थात् उसका अंग हो। कथा के प्रभाव को सघन करने के लिए उसका प्रयोग उचित नहीं है, लेकिन पृष्ठभूमि में संगीत का उपयोग अभिनय को निश्चय ही सार्थक कर देता है।

●नाटकों में संवाद प्रायः बड़े-बड़े हो जाते हैं और उसमें दार्शनिकता और विवेचन-वृत्ति मुखर होने लगती है। क्या यह नाटकीयता में बाधक है?

❑आज के नाटकों में संवाद बड़े-बड़े नहीं होते। दार्शनिकता और विवेचन-वृत्ति को भी अच्छा नहीं माना जाता। इनका प्रयोग वांछित प्रभाव के पड़ने में बाधक होता है, लेकिन आवश्यकता जहाँ हो वहाँ ये शक्ति भी बन जाते हैं। यह अभिनेता पर निर्भर करता है कि वह किस प्रकार इनको सार्थक बना सकता है। यही बात स्वागत के लिए भी कही जा सकती है। नाटक को मंच पर प्रस्तुत करने का दायित्व निदेशक का होता है। वो यह जानता है कहाँ किस वस्तु की सार्थकता है, कहाँ वो बाधक है। वही नाटक की कृति में प्राण डालता है।

●क्या नाटककार होना किसी जीवन-दर्शन का प्रतिपादक हो सकता है? यदि हाँ, तो आपके नाटकों का जीवन-दर्शन क्या है?

❑जीवन-दर्शन का प्रश्न नाटक के संदर्भ में क्यों, साहित्य और व्यक्ति का क्यों नहीं? जो मेरा जीवन-दर्शन है वही मेरे साहित्य का दर्शन है और अगर मेरा कोई जीवन-दर्शन हो सकता है तो वो मनुष्य की तलाश है। व्यापक अर्थ में इसे सत्य की तलाश भी कह सकते हैं और सत्य से अधिक सत्य की तलाश महत्वपूर्ण है, तो मैं कहूँगा कि यह तलाश ही मेरा जीवन-दर्शन है।

●पुरानी मान्यता है कि नाटक का प्रारम्भ कौतुहल से और समापन परितुष्टि से होना चाहिए। क्या आपने इस मान्यता का समादर किया है?

❑पुरानी मान्यताएँ निरन्तर टूटती रहती हैं। नाटक, नाटक होना चाहिए। प्रारम्भ कौतुहल से और समापन परितुष्टि से यह आज अर्थहीन है। युग यथार्थ का है, वहाँ समापन 'सुख के दिन बहुरे' ऐसे आप्त वाक्यों से नहीं हो सकता। त्रासदी आज जीवन का सत्य है। प्रश्नाकुलता में समाहार का कोई अर्थ नहीं होता। मंज़िल से अधिक मंज़िल की तलाश आज के साहित्यकार को आकर्षित करती है-

'तलाशो-तलब में वो लज्ज़त मिली है
दुआ कर रहा हूँ कि मंज़िल न आए।'

●नाटक की भाषा और उपन्यास की भाषा में मूलभूत अन्तर को स्वीकारते हुए अपनी रचनाओं के भाषा विभेद पर कृपया प्रकाश डालें।

❑नाटक की भाषा और उपन्यास की भाषा में तो अन्तर ही अन्तर है और वो बहुत स्पष्ट है। मेरी रचनाओं में भी यह भेद जाना जा सकता है। नाटक में कृतिकार अपने पात्रों के माध्यम से बोलता है और सीधे बोलता है। उपन्यास में वो स्वयं भी एक पात्र बनकर कहता-सुनता है। इसके लिए अलग-अलग भाषा की आवश्यकता नहीं होती और कृतिकार को इस बारे में सोचना नहीं पड़ता। जिस विधा को लेकर वह लिख रहा है, उसी विधा की उपयुक्त भाषा

स्वत: ही उसके अन्तर से उमड़ती रहती है। जब तक मन के सुर के संग शब्द का सुर नहीं मिल जाता तब तक रचना सार्थक नहीं बनती। बनती है तो लेखक सफल रहता है, नहीं तो असफल। मैं जानता हूँ कि मैं पूर्णत: सफल नहीं हो पाया हूँ। ये हर कृतिकार की अपनी क्षमता पर निर्भर करता है कि वह किस सीमा तक उसकी अभिव्यक्ति निर्झर के समान सहज नहीं हो जाती, तब तक सफल या असफल हो सकता है। अभी मेरी मंज़िल दूर है।

●कथोपकथन की स्वाभाविकता को किस सीमा तक आप उचित समझते हैं? क्या आप अंग्रेज़ी, उर्दू या ग्राम्य शब्दावली का प्रयोग उचित मानते हैं?

❑कथोपकथन या संवाद जितने स्वाभाविक होंगे उतना ही नाटक सफल होगा। भाषा न कठिन होती है न सरल। वो सहज होती है। अर्थात् विषय व परिस्थिति के अनुरूप उसमें अंग्रेज़ी, उर्दू या ग्रामों में प्रचलित शब्द निश्चय ही आ सकते हैं लेकिन जान-बूझकर ऐसा करना कृति के प्रभाव को नष्ट करना ही होगा। आग्रह और दुराग्रह में अन्तर करना हमें सीखना चाहिए।

●संप्रति आप क्या लिख रहे हैं और आगे लिखने की क्या योजना है?

❑मुझे सबसे पहले अपने संस्मरणों का चौथा भाग पूरा करना है। सामग्री निकाल कर रख ली है परन्तु इतनी डाक आती है कि अभी तक एक शब्द भी नहीं लिख पाया हूँ। स्वास्थ्य बहुत परेशान करने लगा है। लिख सका तो बहुत अच्छा, न भी लिख सका तो काई हानि होने वाली नहीं है।

-('शब्द शिल्पियों के सानिध्य' से साभार)
४४-शिव विहार, फरीदी नगर,
लखनऊ-२२६०१५ मो. ९४१५०४५५८४

सतीश गुप्ता 'द्रवित'

बड़ी अनोखी चीज है, यह संसद की हाट
आँखें मूंदे नृप यहाँ, चमचों के हैं ठाट
जन सेवा करते नहीं, करते भ्रष्टाचार
जनता का धन लूटने, जुटे सभी मक्कार
नई सभ्यता लाई है, धन अर्जन की होड़
भटके हैं पथ से सभी, न्याय-नीति को छोड
पैसा ही संसार में, जीवन का आधार
बेबस ईमां बेचकर, पाल रहा परिवार
दिखे सदन में मंच पर, नौटंकी के सीन
एक निष्ठ थे जो कभी, अब तेरह में तीन
परेशानियों की चली, ऐसी कुटिल बयार
चुक न पायेगा कभी, पिछला लिया उधार
भ्रष्ट आचरण हो गया, जन-जन का कानून
श्रेठ भावना का यहाँ, पग-पग होता खून
लोकतंत्र तो है मगर, लोक यहाँ लाचार
बिजली, पानी सड़क का, होता बंटाढार
जन रक्षक, भक्षक बने,कौन सुने फरियाद
किसके आगे रोंएं अब, कहाँ मिले इमदाद
'द्रवित' के द्रग में अश्रु हैं, सदसंस्कृति ह्रास
था स्वर्णिम पहले कभी, भारत का इतिहास

★

१०३, निर्मल कुंज, सिकलापुर, बरेली
मो. ९२५८३२३६१०, ८७५५९९१००६

सतीश गुप्ता 'द्रवित'

प्रभु त्रिवेदी

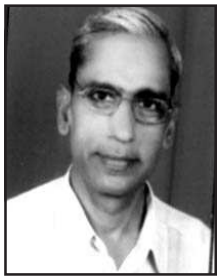

प्रभु त्रिवेदी

हरे-भरे वन में उगें, कंद-मूल, फल-फूल
वन उजाड़कर बस मिले, रेगिस्तानी धूल
हिरण भेड़िए शेर सब, करते वन में सैर
जल सब ही का मित्र है, रखे न मन में बैर
नदिया, झरने रच रहे, कलकल का संगीत
सृष्टा-दृष्टा बन यहाँ, मन को लेता जीत
आम-जाम नींबू तथा, ककड़ी केल अनार
सेहत के हमदर्द हैं, पक्के पहरेदार
डिब्बा, थाली, पोटली, बिस्तर तीर-कमान
जंगल भी अब कर रहे, शहरों को प्रस्थान
पेड़ों का रक्षण करो, करो जीव का मान
जंगल से ही है जुड़ा, जीवन का विज्ञान
वन से रक्षित है धारा, जनधन-पशु आवास
प्राणवायु, जल सम्पदा, देते वन सोल्लास
बरगद-पीपल सह रहे, करवत के आघात
रैन बसेरे लुट रहे, पंछिन के दिन-रात
सेहत की रक्षा करे, बड़ा कसैला वृक्ष
अंग-अंग पर ज्यों लिखा, रोग निवारण कक्ष
हरे पेड़ की मौत का, वो क्यों शोक मनाय
टेबल-कुर्सी बेचना, है जिसका व्यवसाय

★

प्रणम्य, १११, राम-रहीम कालोनी, राऊ,
इंदौर-४५३३३१, मो. ०९४२५०७६९९६

आश्वासन

-शम्भु प्रसाद भट्ट 'स्नेहिल'

समय चक्र के प्रभाव से, बढ़ जाती हैं आवश्यकताएँ
पूर्ण हुई यदि न ये मांगें, तो बन जाती हैं समस्याएँ
ले हाथ में झण्डा विद्रोह का, आगे बढ़ती राहें।
बजा बिगुल आन्दोलन का, फिर तन जाती हैं बाहें।

लम्बे अन्तराल से खुलती नींद कभी शासन की।
करते मन्त्रणा तब, समस्याओं के समाधान की,
बनाकर प्रतिनिधि किसी को, तब भेजता शासन,
कर जनता से वार्ता, दे जाता जो आश्वासन।

मात्र औपचारिकता निभाने, आ जाते हैं नेता,
कभी न पूरा होने वाला, आश्वासन वह देता।
कर विश्वास आश्वासन का रुक जाते हैं आन्दोलन,
लेकिन समय चक्र के चलते पूरा हुआ न आश्वासन।

उठ जाती आवाजें फिर से, झूठे वादों के खिलाफ,
सक्रिय हो नेता अधिकारी, भागें देने को इन्साफ।
किसी तरह जन भावनाओं को करते हैं वे अंगीकार,
नेता मंत्री और अधिकारी, जो विकास के दावेदार।

लेकिन क्षेत्र विकास के बदले, इनका जारी स्वविकास
झूठ घोषणा और आश्वासन, से हो सकता नहीं विकास
सच्चे मन से जन सेवाकर, मिल सकता जीवन प्रकाश
काल चक्र के साथ ही बदल जाएँ आवश्यकता,
शीघ्र पूर्ण हो सर्वजन इच्छा, प्रभु से यह इच्छा करता।

-नन्दा देवी बायोस्फियर रिज़र्व,
गोपेश्वर, चमोली (उत्तराखण्ड)

तुम लौट आये -प्रकाश चन्द्र लोशली

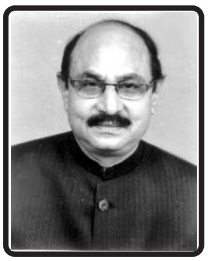

पूरन और बसन्ती गाँव के सरकारी स्कूल में एक साथ बैठते-पढ़ते, खाते-खेलते बड़े हुए थे। बसन्ती ग्राम प्रधान की नाज़ों में पली बेटी थी तो पूरन चार भाई बहनों में सबसे बड़ा था। पिता जी के पास आठ नाली जमीन थी और पास की फैक्ट्री में छोटी-मोटी नौकरी, किसी तरह गुजर बसर हो रही थी।

वक्त पंख लगाकर उड़ रहा था। पूरन और बसन्ती बचपन छोड़ युवा हो चुके थे। इस उम्र के सपनों की बात कुछ और होती है। सपनों में वे कभी डॉक्टर बनते तो कभी इंजीनियर, पर जो भी संकल्प लेते वह एक साथ लेते।

इधर दोनों ने प्रथम श्रेणी में इन्टर पास किया ही था कि पूरन के पिता को फालिज पड़ गया। अचानक आई विपदा से पूरन के सपने चकनाचूर हो गए। चार नाली ज़मीन बेचकर पूरन पूरे परिवार को लेकर हल्द्वानी किराए के मकान में रहने लगा ताकि पिता का इलाज हो सके और अपनी व भाई बहनों की पढ़ाई जारी रख सके। शहर आकर ट्यूशन पढ़ाना शुरू किया, पिताजी का इलाज कराया, अपनी व भाई-बहनों की पढ़ाई जारी रखी। जिन्दगी एक बार फिर पटरी पर आ चुकी थी।

बसन्ती बी.एड. करके गाँव के पास के विद्यालय में अध्यापिका नियुक्त हो गई थी। बसन्ती पुरानी यादों के सहारे एकाकी जीवन व्यतीत कर रही थी। पूरन के साथ बिताए पल ही उसके जीने का आधार बन गये थे। उधर पूरन पंतनगर विश्वद्यिालय से कृषि विज्ञान में स्नातकोत्तर डिग्री लेकर वैज्ञानिक की नौकरी पर दिल्ली में नियुक्त हो चुका था। पूरन जैसे-जैसे सफलता की सीढ़ियाँ चढ़ता जाता, बसन्ती उतने ही कदम पीछे छूटती जाती। बड़े शहर की चकाचौंध में माँ-बाबू जी, भाई-बहन सब पीछे छूट गए। उनसे नाता बना रहा तो मात्र मनीआर्डर भेजने तक का। भोली-भाली बसन्ती की यादें कपड़े पर पड़े वक्त के साथ धुँधलाए दाग हो गयी थीं।

अब उसकी ज़िन्दगी में आ गई थी खूबसूरत, 'चंचल छाबड़ा'। यथा नाम तथा गुण, न्यू इयर की पार्टी में मिली थी चंचल। युवा, अविवाहित पूरन और उसके डाइरेक्टर की बेटी चंचल। उस मदमाती शाम नज़रों ही नज़रों में न जाने कब एक दूसरे को दिल दे बैठे। अब तो हर शाम साथ गुज़रने लगी। चंचल के रूप सौंदर्य एवं आधुनिक जीवन शैली में उलझ कर रह गया पूरन। जब दूरियाँ बर्दाश्त से बाहर हो गईं तो दोनों ने शादी करने में ही भलाई समझी।

पूरन डाइरेक्टर साहब से चंचल का हाथ मांगने आया था। डाइरेक्टर साहब को भला क्या आपत्ति होती। वह खुद अपनी बद्दिमाग, बिगड़ैल बेटी की किसी भी तरह से शादी करना चाहते थे। वास्तव में प्यार अंधा नहीं होता, अंधी होती शारीरिक आकर्षण और वासना की आग। प्यार तो पूजा है, त्याग, समर्पण, मर्यादा और परस्पर विश्वास पर टिका हुआ होता है।

आज चंचल फिर लेट हो गई थी। पूरन बार-बार घड़ी देखता उसकी नशे की खुमारी भी उतर चुकी थी। वह सोच रहा था, 'मात्र सात महीने ही शादी को हुए, ऐसा कौन-सा आकर्षण है जो चंचल को रात भर बाहर रहने को मजबूर करता है? रोज नए दोस्त, पार्टियाँ, नई ड्रेस। आखिर क्या कमी है मुझमें?' विचारों की शृंखला में डूब गया पूरन। अतीत के आइने में जमी गर्द को साफ करते हुए एक तस्वीर उभर कर आई, बसन्ती! अनायास ही अनगिनत पल फिल्म के रूप में उभरे मानस-पटल पर, ''देखो पूरन पत्नी तो पति का इंतज़ार करती ही भली लगती है।''

''ट्रिन...ट्रिन...ट्रिन,'' घण्टी, ओह! तन्द्रा टूटी, यह तो डोर बैल है। विचारों की शृंखला पर विराम लग गया। चंचल के अंदर आते ही झल्ला पड़ा पूरन....''कहाँ थीं इतनी रात तक....सुबह होने को आई। घड़ी देखी तुमने?''

''ओह डार्लिंग! नाराज़ क्यों होते हो, कहा

तो था, आज लेट हो जाऊँगी....।'' उसके लड़खड़ाते शब्द गले में अटक कर रह गए। पर्स फेंक वह सोफे पर पसर गई। पूरन की आँखों से नींद पूरी तरह गायब हो चुकी थी। जेहन में बसन्ती के बिम्ब बनते चले गए।

क्या हो गया था मुझे? शायद मेरी तन्हाई ने मुझे कमज़ोर कर दिया था, पर मुझ में क्या देखा था इसके बाप ने? मात्र एक अच्छी नौकरी....समझ गया! डाइरेक्टर साहब जानते होंगे अपनी बेटी के बारे में, जो नहीं बंध सकती एक खूँटे से, फिर मैंने ही तो मांगा था चंचल का हाथ। वे भला इनकार क्यों करते? जल्दीबाजी में लिए फैसले का दोष किसे देता? आए दिन बहस, झगड़े से तंग आ गया था पूरन। फिर एक दिन इन झगड़ों का अंत हो गया तलाक के रूप में।

बॉस की बेटी को तलाक देकर नौकरी करना बोझ लग रहा था पूरन को। मोहभंग हो चुका था शहर से। चुपचाप नौकरी से त्यागपत्र देकर अपने घर आ गया, अपनों के पास। उसे लगता गाँव की वादियाँ पुकार रही हैं उसे। किसी तरह अपनी गल्तियों की माफी मांग कर माँ-बाबूजी को राजी कर लिया गाँव वापस चलने के लिए।

आज का सूरज जाना-पहचाना-सा लगा उसे। मानो कह रहा हो अभी सांझ बहुत दूर है। तुम्हें चमकना है, अपनो के लिए। निराशा के गर्त से निकल कर राह रोशन करनी है अपनी और अपनो की।

दैनिक कार्य निपटाकर निकल पड़ा वह गाँव की पगडण्डियों पर। सब कुछ वैसा ही था, जैसा छोड़कर गया था। वहीं खेतों में काम करती महिलाएँ, उन चेहरों में खोजने लगा अपनी चाची-ताई, आमा (दादी) को। तभी कन्धे पर बैग लटकाए सधे कदमों से राह नापती एक सादगी की मूरत मोहक व्यक्तित्व, शायद कोई अध्यापिका थी जो पढ़ाने जा रही थी स्कूल। ज्यों-ज्यों वह आगे बढ़ती गई तस्वीर साफ होती गई। ओह....यह तो बसन्ती है। आमने-सामने एक दूसरे को देखकर सहसा आँखों पर विश्वास नहीं हुआ।

''पूरन तुम? लौट आए?? कब, कैसे, क्यों???'' हज़ार सवाल थे बसन्ती की आँखों में.... और पूरन! बस इतना ही कह सका....''तुम राह देख रही थी न मेरी....मैं लौट आया तुम्हारे लिए....अपने गाँव के लिए....'' दोनों की आँखें नम हो गयी, शब्द मूक हो गए। पूरन ने कस कर हाथ पकड़ लिया बसन्ती का, ''अब मैं वापस आ गया हूँ। मेरे पास जो पूँजी है, उससे गाँव में जमीन खरीद कर नई तकनीक व शोध के आधार पर बगीचे लगाऊँगा। मेरी मेहनत रंग लायेगी लहलायेंगे मेरे खेत। तुम देखना बसन्ती, मैं बदल दूँगा अपने गाँव की तस्वीर।''

तभी बसन्ती चहक उठी, ''वर्षों इंतज़ार किया अब और नहीं, माँ बाबूजी से माँग लो मुझे सदा के लिए।'' अनायास ही झुक गई आँखें बसन्ती की। पूरन ने बसन्ती को पूरी शिद्दत से अपने आगोश में ले लिया।

-'प्रवास' द्वारकापुरी (विस्तार),
जी.एम.एस. रोड, देहरादून

आरोप -सीताराम गुप्ता

पूजा-अर्चना में तल्लीन भक्तिन कृष्ण की नयनाभिराम मूर्ति के सम्मुख एक हाथ से सुलगती हुई अगरबत्ती घुमाते हुए तथा दूसरे हाथ से घंटी बजाते हुए अत्यंत श्रद्धा-भाव से हरे कृष्णा, हरे कृष्णा, हरे कृष्णा का उच्चारण कर रही थी। अचानक तेज़ हवा का झोंका आया और दरवाज़े-खिड़कियाँ भड़भड़ा उठे। भक्तिन की तल्लीनता में विघ्न उत्पन्न हुआ। उसके माथे पर बल पड़ गए। गर्दन घुमाकर उसने पीछे दरवाज़े की ओर देखा और होठों में बुदबुदाते हुए कहा, ''हे राम! ये क्या हो रहा है?''

ए.डी.-१०६-सी, पीतमपुरा, दिल्ली-११००३४
फोन नं. ०११-२७३१३६७९/९५५५६२२३२३
Email : srgupta54@yahoo.co.in

मो. कासिम खान 'तालिब'

जो उसूलों की राह चलता है
वो ज़माने को बहुत खलता है

अपनी रफ़्तार दो ज़माने को
वक़्त कब साथ-साथ चलता है?

खूँ पिलाओ या दूध तुम यारो
साँप कब आदतें बदलता है

प्यास पाती है जब बुलन्दी को
आबे-ज़मज़म तभी निकलता है

मुफलिसी के दयार में 'तालिब'
इल्मो-फन का चिराग़ जलता है

★

१४-अमीर कम्पाउण्ड, डी.एन.पी. रोड,
देवास-४५५००१ मो.०९७५४०३८८६४

रवि प्रताप सिंह

चाँद छत पर बुलाने से क्या फायदा
आसमां को रुलाने से क्या फायदा

नेस्तो-नाबूद हो जाएंगी हसरतें
रेत का घर बनाने से क्या फायदा

जल रही हो जिगर में जलन की अगन
बारिशों में नहाने से क्या फयदा

धुँध में ढंक गई हों सभी मंज़िलें
कारवां फिर सजाने से क्या फायदा

शेर में हर्फ का जो सफर छोड़ दे
उसको ग़ज़लें सुनाने से क्या फायदा

★

४२७/सी., पातीपुकुर, पो. ऑ. श्रीभूमि,
कोलकाता-७०००४८, मो. ०८०१३५४६९४२

तारकेश्वर शर्मा 'विकास'

जो सदा पीते-पिलाते रह गए
आँख का काजल चुराते रह गए

शायरी पर हम भला कितना कहें
आँच पाकर कड़कड़ाते रह गए

गीत लिक्खे पत्थरों पर अनगिनत
पीठ अपनी थपथपाते रह गए

शे'रे-मक्ता नाम अपना दर्ज कर
शौकिया हस्ती रजाते रह गए

तोड़ पाए क्या कभी हम चुप्पियाँ
चुप्पियों पर सिर खपाते रह गए

★

डब्ल्यू-३६, यूनिट-२, न्यू ट्रेफिक रेलवे
कालोनी, इंदा खड़गपुर-७२१३०५
मो.०९४३३४५७०४

सुप्रिया ढाँडा 'वाटिका'

रौशनी हो के न हो, दिल जला के रखते हैं
हम मुश्किलों में भी तेवर बला के रखते हैं

मिला दिया है सभी कुछ भले ही मिट्टी में
हम अपनी आँख का पानी बचा के रखते हैं

बस एक खुद से ही अपनी नहीं बनी वरना
ज़माने भर से हमेशा बना के रखते हैं

हमें पसंद नहीं जंग में भी चालाकी
जिसे निशाने पे रखते, बता के रखते हैं

अना पसंद 'वाटिका' है, सच सही लेकिन
नज़र को अपनी हमेशा झुका के रखते हैं

★

प्लॉट नं. १८६-आर., नज़दीक एन.आई.टी.
बस स्टैण्ड, तिकोना पार्क, फरीदाबाद

उदय करण 'सुमन'

मिले बड़े मतवाले लोग
गोरे पीले काले लोग

हाथों में तो खंजर रखते
मुख पर रखते ताले लोग

फणियर से मन वाले देखे
बेहद भोले-भाले लोग

झूठ कमाई दिन भर खाते
बड़े संत मतवाले लोग

घी-शक्कर से बेहद मीठे
ज़हर भरे हैं प्याले लोग

★

सुमन सेवा सदन, रायसिंह नगर,
जिला श्री गंगानगर-३३५०५१

इन्द्रपाल सिंह परिहार 'अभय'

निर्धन की कुटिया में झांको
कैसे जीवन जीता आँको

भीषण सर्दी तन न चिथड़ा
अगर बने तन उसका ढाँको

वादे कितने किए निभाए
बड़ी-बड़ी बातें न फांको

नहीं पंखुड़ी भी गरीब को
तुम गुलाब ले पूरा टाँको

अब समझे औक़ात तुम्हारी
बस रहने दो, और न हाँको

★

स्वामी विवेकानन्द इंटर कालेज, ईगुई बँगरा,
जालोन-२६५१२१, मो. ७८९७०४९५२४

वैशाखी, यमुना और बच्चे

-डॉ. कविता वाचक्नवी

गर्मी अभी शुरू नहीं हुई थी। आँगन में सोना शुरू हो चुका था। आँगन इतना बड़ा कि आज के अच्छे समृद्ध घर के दस-ग्यारह कमरे उस में समा जायें। एक ओर छोटी-सी बगीची थी। बगीची के आगे आँगन और बगीची की सीमा-रेखा तय करती तीन अंगुल चौड़ी और आधा बालिश्त गहरी, खुली नाली थी, जिसे महरी सींक के झाड़ू से, आदि से अंत तक एक ही स्ट्रोक में साफ करती आँगन की दो दिशाएँ नाप जाती थी। नीचे हरी-हरी काई की कोमलता, ऊपर से बहता साफ पानी...। मैं कल्पना किया करती कि चींटियों के लिए तो यह एक नदी ही होगी... और मैं चींटी बन जाती अपनी कल्पना में। फिर उस नन्हें आकार की तुलना में इस तीन अंगुल चौड़ी नाली के बड़प्पन की गम्भीरता में, एक फर्लांग की दूरी पर बहती यमुना याद आती। याद आता उसके पुल पर खड़े होकर नीचे गर्जन-तर्जन, भँवर, पुल के खम्भों का दोनों दिशाओं में काफी बाहर को निकला हुआ भाग। उनसे टकराती, बँटकर बहती धाराएँ। पुल पर खड़े-खड़े मैं इतना डूब जाती कि लगता पुल बह रहा है और मैं निरंतर आगे-आगे बही जा रही हूँ.....जंगला थामे खड़ी।

आज भी डर लगता है, मैं जिसे भी यह समझाने की कोशिश करती, सब हँसते। इसीलिए जब कभी वहाँ से गुजरती, एकदम बीचों-बीच होकर। पुल के किनारों की ओर चलने में मुझे हर समय डर लगता। आज भी वैसा ही है। सड़क के बीच डिवाइडर पर खड़े होकर ट्रैफिक रुकने की प्रतीक्षा करनी पड़े तो चक्कर आ जाता है।.....गिर ही जाऊँ ....इसलिए उस से सटकर नीचे सड़क पर खड़े होना बेहतर लगता है।

नाली को नदी और स्वयं को चींटी बनाकर जाने कितनी बार मैंने नाली सूखने की प्रतीक्षा की होगी। और यह वह ऋतु थी, जब दोपहर दो बजे तक के रसोई के काम-काज निपटाने के बाद पाँच बजे तक नाली आराम करती-करती ऐंठना शुरू हो जाती। अप्रैल से ज्यों-ज्यों धूप बढ़ने के दिन आने लगते, दोपहर बाद से ही नाली का हरित-सौंदर्य बुढ़ापे की खाल-सा सूखा व बेजान होकर दीवारों से अन्दर की ओर मुड़ने लगता। पपड़ियाँ बनकर तुड़ते-मुड़ते मुझे विचलित करता रहता। उधर मुझे पानी के नीचे काई के लम्बे हरे तंतु कोमलता से बहते ऐसे लगा करते थे, जैसे नदी की धार के विपरीत मुँह करके सिर का पिछला भाग पानी में ढीला छोड़ देने पर लम्बे-लम्बे बाल सुलझे से होकर धार में लहराते-तिरते हैं। पर अप्रैल आते ही नाली कुरूप हो जाती।

नदी और नाली में कोई संयोग नहीं, कोई मेल नहीं। बिल्कुल ही बेमतलब बात हो गई।

होली में नाली रंग-बिरंगी हो जाती, उस पर स्वच्छ पानी बहता तो उसमें होली के छींटे देखकर मुझे हरी घास पर गिरे रंग-बिरंगे फूलों की रंगीन पंखुरियाँ याद आतीं।

इस नाली को नदी का रूप तब और भी मिलता जब आती बैसाखी। हमारे यमुना की रेत में पगे कपड़े पछारकर पानी सारी रेत नाली के छोर पर छोड़ देता तो और भी असली रूप लगता उसका। किताबों में डेल्टा पढ़ा-ही-पढ़ा होगा उन दिनों, क्योंकि डेल्टा का रूप भी मैंने नाली के उल्टे बहाव की कल्पना करके वहीं समझने की कोशिश की थी। हमारे बीस लोगों के परिवार के कपड़ों की रेत खाई बैसाखी की दुपहरी की नाली में।

तो यों होली व बैसाखी आकर नाली के रंग-ढंग बदल जातीं। जब कभी घर में पुताई होती, नाली उसमें भी बढ़-चढ़कर हिस्सा लेती, बिना हील-हुज्जत के।

.....पर आज यह सब क्यों याद आ रहा है?

आज फिर बैसाखी है। पर वे दिन अतीत बन गए हैं। 'केबल' का एक चैनल दरबार साहब

(स्वर्ण मन्दिर) से गुरबाणी का सीधा प्रसारण फेंक रहा है। मन में बैसाखी उमगती ही नहीं अब। उमगती हैं, केवल यादें, जिनसे जोड़-जोड़कर मैं आज के बच्चों के लिए पश्चाताप से उमगती-तड़पती रहती हूँ। कितनी चीज़ों से वंचित हैं ये। न तो ये खुली नाली वाले आँगन जानते हैं, न छतों पर सोना, न आँगन में देर रात तक चारपाइयाँ सटाए खुसर-पुसर बतियाना, न गर्मी में बान की चारपाई पर केवल गीली चादर बिछाकर सोने का मज़ा, न सत्तू का स्वाद, न कच्ची लस्सी, न कड़े के गिलास, न चूल्हे की लकड़ियों के अंगार पर फुलाई गरमागरम पतली छोटी चपातियाँ, न भूसी में लिपटी बर्फ की सिल्ली तुड़वाकर झोले में लाई बर्फ, जिसे झोले सहित गालों से छुआया जा सकता है.....और ज्यादा शैतानी की नौबत आ जाए तो चुपके से घर पहुँचने से पहले, चूसा भी जा सकता है, न गर्मियों में सूर्यास्त के बाद ईंटों जड़े आँगन में बाल्टियों से पानी फेंकना, ताकि खाना खाने और सोने के लिए आँगन में चारपाइयाँ डाली जाने से पूर्व 'हवाड़' निकल जाए और आँगन ठंडा हो जाए, न इस प्रक्रिया में अपने ऊपर बाल्टी भर-भर पानी उंडेलने, भीगने की आजादी का रोमांच व मज़ा।

ये तो बंद बाथरूम में नहाते हैं-शयन कक्ष के भी भीतर।

कभी-कभी मौका लगता तो ४०-५० फुट लम्बे चिकने बरामदे में खूब पानी फैलाकर फिसला-फिसली का खेल या 'खुरे' की नाली में कपड़ा ठूंसकर डेढ़ बालिस्त की गहरी तलैया का मज़ा, जिसमें एक-दूसरे पर खूब पानी फेंकने, धक्का-मुक्की करने और हाथों की छपाकियों से पानी उड़ाने.....हो-हल्ला करने से बाज़ नहीं आते थे हम।

मैं अपने बच्चों के लिए कलपती हूँ कि इतना कुछ नहीं देखा इन्होंने। हमारा बचपन भी इन बच्चों की विरासत में न आया।

इन सारी कारगुजारियों में हैण्डपम्प और टोंटी, दोनों ही पानी का अवदान देते न अघाते। दोनों 'खुरे' के भीतर मुख किए आमने-सामने डटे थे। इतना सब होते-हवाते 'हैण्डपम्प' का पानी इतना ठंडा हो जाता कि एक गिलास पीने में दांत 'ठिर' (ठिठुर) जाते। आज 'बोर-वेल' के पानी टेस्ट करवाने के बावजूद हाथ के नलके की गुंजाइश नहीं मिलती, मोटर से चलाते हैं और पीने से घबराते हैं।

हमारे लिए बैसाखी कमरों से शाम की मुक्ति के पर्व मनाने आती थी। दादी जी, जिन्हें हम 'भाब्बी जी' कहकर बुलाते थे, पिछली रात ही ताकीद कर देतीं, 'कुड़ियो! जे सवेरे जमना जाणा होए ते रात्ती छेत्ती सो जाणा। गल्लां नाँ करदियाँ रहणा। छड्ड जाणै नईं ते आप्पाँ.....जे ना उट्ठियाँ ते।'' (लड़कियो! यदि सुबह यमुना जी जाना हो तो सुबह जल्दी उठ जाना, न उठीं तो हम घर में ही छोड़ जाएँगे)। दादी जी दुल्हन बनकर नन्हीं-सी बालिका के रूप में ही इस घर में आई थीं। परिवार की सबसे बड़ी वधू। सास थी नहीं, तीन-तीन गबरू-गँवार और पेंडू देवर। पहला सम्बोधन इस खानदान में आते ही दादी को 'भाब्बी' का मिला। उन्हीं की देखा-देखी अपने बच्चे भी भाब्बी कहते। हमें झाई जी ने 'भाब्बी जी' कहना जीभ पर चढ़वाया।

सुवख्ते (मुँह अंधेरे) उठ जाती थीं भाब्बी जी, वड्डे झाई जी, विजय, दीदी (बुआ), पम्मी, चाची जी, मैं, कद्दू (छोटे भाई का प्यार का नाम), और चाचा लोग। हालांकि बिस्तर से उठने की ज़रा भी इच्छा नहीं होती थी। हम हर बार कहते 'असीं नईं जाणा' (हमें नहीं जाना)। दीदी कहती, 'फेर रोवोगियाँ (बाद में रोती रह जाओगी)' और अपनी पतली-पतली नाजुक अंगुलियों वाले नन्हे-नन्हें हाथें से हमें गुदगुदी करके उठा देतीं। झोलों में पिछली रात ही कपड़े भर लिए जाते। हम तीनों बच्चे अधमुंदी आँखों से खीझे-खीझे नाक और गालों को ऊपर चढ़ाए ऊँहु-ऊँहु, डुस-डुस करते, हाथ पकड़े हुए लगभग लाद-लूदकर ले जाए जाते।

तारे अभी आकाश में होते थे, हम में से कोई पूछता, 'जमना कितनी दूर हैगी अजे' (अभी

यमुना कितनी दूर है)? भाब्बी जी डपटती, ''सौ वारी आख्या, जमना 'जी' आक्खी दै। चज्ज नाल नाँ वी लित्ता नईं जांद्दा, ते चल्ले ने वसाखी न्हांण'' (सौ बार सिखाया है, जमुना 'जी' कहते हैं। ठीक से नाम भी नहीं लिया जाता और चले हैं बैसाखी नहाने)।

वहाँ पहुँचकर डुबकियाँ लगाती भीड़, दूर दूसरी ओर नहाते पुरुष, महिलाओं-बच्चों का शोरगुल सारी नींद उड़ा देता। धीरे-धीरे, सहमते-सहमते हाथ पकड़कर 'जमना जी' में उतरना, पैर रखते ही रेत का दरक जाना, या पैर का धीरे-धीरे और अन्दर गड़ना, डराने के लिए काफी होता था। ठंडा पानी छू-छूकर हमारे दुस्साहस को उकसाता। हमें तो कपड़े पहने-पहने ही पानी में उतरना होता था। ब्याहता स्त्रियाँ कंधों के नीचे बगलों में पेटीकोट बाँध लेतीं। ढँकने योग्य भाग ढँक जाता, लगभग घुटनों तक। हम सभी घेरा बनाकर एक-दूसरे का हाथ पकड़ लेते। एक-साथ पानी के भीतर जाते, एक-साथ उठ खड़े होते। कूल्हों तक के पानी में उतरना निरापद माना जाता था। वैसे आस-पास भीड़ के कारण यों भी डर कम रहता था। इतने पानी के माप में पहुँचना यानि यमुना के मध्य भाग के एक ओर का तीसरा भाग। हम लोग, यानि बच्चे, तो फिर पानी से निकलने का नाम ही नहीं लेते थे। पौ फटने को होती तो सब लोग जल्दी मचाते और हम बच्चों में से कोई तर्क देता कि अभी तो अंगुलियाँ भी बूढ़ी नहीं हुई हैं। पेल-पालकर हमें निकाला जाता। घर से फर्लांग भर ही दूरी थी, अतः हमें वहाँ खुले में कपड़े नहीं बदलने दिए जाते। हम चाहते भी यही थे। उन्हीं भीगे टपकते कपड़ों में चमकीली, हल्के हरे-नीले रंग की रेत आँज कर, रेत सनी चप्पलें पहने घर लौटते।

बैसाखी के सारे आयोजनों में इतना-भर मतलब का लगता। बाकी दिन क्या पका, क्या हुआ, वह कुछ भी नहीं लगता। या फिर याद हैं तो, 'जट्टा! आई वसाखी' का गीत और पंजाबी भंगड़े-गिद्दे, 'वारणे' के छोटे-छोटे फ्लैश।

अब घर जाते हुए दिल्ली में बस की खिड़की से झांकने पर यमुना का पराई-सी लगना तो दूर, यमुना रही ही नहीं, दीखती है। नीचे नदी में किसी खड्डे में मैले पानी का ज़रा-सा जमाव है बस्स! यमुना का अपना पानी कहीं नहीं सूझता। नगर के लिए यह 'सीवर-लाइन' फेंकने का गड्ढा भर है।

बैसाखी फिर आई है, मुझे अपने पैतृक नगर अमृतसर के सरोवर और जलियाँ वाला बाग के लाश-भरे कुएँ के साथ-साथ अपनी यमुना की याद आ गई, औरों को भी आती होगी न?

kavita.vachknavee@gmail.com

अंधा अहम्

-मदन मोहन उपेंद्र

ज्ञान और अहंकार दो मित्र थे, प्रेम से रहते थे। जीवन भर प्रेम से रहने का प्रण भी कर चुके थे। अनायास अहंकार व्यापार करने विदेश चला गया। प्रभु-कृपा से खूब धन कमाया और प्रसिद्ध धनकुबेर बन गया। दूर देशों में उसकी चर्चा होने लगी तो ज्ञान ने सोचा, चलो, मित्र से मिलकर आयें। देखें उसमें अभी भी वही मैत्रीभाव है या नहीं है?

ज्ञान, अपने मित्र अहंकार को खोजता हुआ उसके महलों तक जा पहुँचा। उसने आवाज़ लगाकर अपने मित्र को बुलाया। मित्र अहंकार ने कहा, ''भइया, मैं तो तुम्हें पहचानता नहीं हूँ। तुम कहाँ से आए हो?''

तब ज्ञान ने उत्तर दिया, ''भैया! तुम्हारा कोई कसूर नहीं। मैंने तो सुना था कि तुम अन्धे हो गए इसलिए देखने चला आया। ठीक है, अंधा भला कैसे पहचान सकता है?''

सम्पादक-सम्यक
ए-१०, शान्ति नगर,
मथुरा-२८१००१

लाइए हम थाम लें बंदूक, चूड़ी आप लें
यूं न हो जब तक उठें तो शत्रु सीमा नाप लें
कर चलें सीमाओं पर झंकार कच्ची चूड़ियाँ
भेंट में ले जाइए सरकार, कच्ची चूड़ियाँ

-सुधा राजे, ५११/२, पीताम्बरा आशीष, फतेहनगर
शेरकोट, बिजनौर २४६७४७ ७६६९४८९६००

असली तस्वीर

-पवन चौहान

आज रविवार था। मंत्री जी की आलीशान सरकारी कोठी के बाहर सुबह से ही लोगों की भीड़ जमा होनी शुरु हो चुकी थी। डोलेराम तो सबसे पहले यहाँ पहुँचा था। लेकिन थोड़ी देर के बाद पता चला कि मंत्री जी कल शाम किसी मित्र की जन्मदिन की पार्टी में गए थे और वे रात को वहीं ठहर गए हैं। अभी दोपहर तक ही उनका आना हो पाएगा।

दोपहर तक मंत्री की कोठी के बाहर लोगों का हुजूम लग चुका था। सभी अपनी-अपनी परेशानियाँ लेकर आए थे। जब दोपहर बाद मंत्री साहब आए तो आते ही लोगों की भीड़ ने उन्हें घेर लिया। डोलेराम भी भीड़ को चीरता हुआ मंत्री जी के करीब पहुँचा और खुश होकर जोर से बोला, 'साहिब! नमस्कार। साहिब, गाँव से विमला ने ये लड्डू आपके मंत्री बनने की खुशी में भेजे हैं। उसने ये सब अपने आप बनाए हैं। आपको नमस्ते भी कहा है।' डोलेराम ने लड्डूओं से भरा बर्तन निकाला और उसे मंत्री जी को देते हुए कहा।

''इसे इन लोगों में बाँट दो।'' मंत्री ने कुछ अटपटे से भाव चेहरे पर बिखेरते हुए कहा।

''साहिब, ये सिर्फ आपके लिए ही हैं। ये आपके वे मनपसंद लड्डू हैं जिन्हें आप विमला से जिद्द करके बनवाते थे।'

''इन्हें परे मेज पर रख दो।'' इस बार मंत्री की बात में फिर वही रुखापन था।

''साहिब, आपसे एक छोटा-सा काम भी था।'' डोलेराम फिर बोला।

''यार तुम तो मेरे पीछे ही पड़ गए हो। देखते नहीं इतने सारे लोग यहाँ हैं। जब तुम्हारी बारी आएगी तो तुम्हारे काम के बारे में भी सोचेंगें।' इतना कहते ही मंत्री जी अपने कमरे में चले गए।

मंत्री के पी. ए. ने सबके नाम एक कागज पर नोट किए और कहा कि जिसका नाम पुकारा जाएगा सिर्फ वही व्यक्ति अंदर आएगा। डोलेराम मंत्री की बातें सुनकर स्वंय को ठगा सा महसूस कर रहा था। उसने कभी सोचा ही नहीं था कि उसे इस तरह से नकार दिया जाएगा।

सभी अपनी-अपनी बारी का इंतजार कर रहे थे। दरवाजे के बाहर बैठा गार्ड जैसे ही अंदर से किसी व्यक्ति का नाम सुनता तो वह उस व्यक्ति को ही अंदर जाने की अनुमति देता। डोलेराम भी अपनी बारी के इतंजार में मकान के एक कोने में सिमट चुका था। वह अपने निजी काम के लिए मंत्री से मिलने दूर गाँव से शहर में आया था। उसने चुनाव के दौरान मंत्री का खूब कार्य किया था। मार-पीट की परवाह किए बगैर वह उन जगहों पर गया जहाँ विरोधी पार्टी का हमेशा से दबदबा था। कई बार तो उसे भूखे भी रहना पड़ता था तथा यहाँ-वहाँ किसी के घर में या फिर खुले आसमान तले किसी पत्थर की ओट में या गऊशाला में रात गुजारनी पड़ती। उसे हमेशा यही एक उम्मीद रहती कि जीतने के बाद वे जरूर उस कार्य को करेगें। जैसा कि मंत्री ने उससे कहा था। मंत्री कई बार रात को डोलेराम के घर भी रुक जाता। वह डोलेराम की पत्नी विमला को अपनी बहन मानता और उसके बनाए देसी घी के लड्डूओं और उसके खाने की तारीफ करते नहीं थकता था। डोलेराम को मंत्री अपना छोटा भाई कहता। कभी-कभार तो चुपके से मंत्री और डोलेराम दोनों इकट्ठे बैठकर शराब और चिकन का लुत्फ भी लेते थे।

आज उसे मंत्री से दो बातें कहने के लिए भी घंटों इंतजार करना पड़ रहा है। चुनाव से पहले और बाद के मंत्री में इतना सारा परिवर्तन देखकर डोलेराम हैरान था। डोलेराम अभी भी उसी कोने में सिमटा अपनी बारी का इंतजार कर रहा था। हरेक व्यक्ति के बाहर आते ही वह सोचता अगला नाम उसका होगा। पर अफसोस, हर बार उसकी सोच धराशायी हो जाती। चमचमाती गाड़ी में आने वाले शख्स बिना

किसी रोक-टोक के अंदर-बाहर आ जा रहे थे। एक बार डोलेराम ने भी ऐसे ही अंदर जाने की कोशिश की लेकिन गार्ड ने उसे दरवाजे के बाहर ही रोक दिया। डोलेराम एक बार फिर दुबक कर उसी कोने में जा बैठा था। मंत्री की डोलेराम से यह बेरुखी और ऊपर से यह बेदर्द सर्दी का मौसम। डोलेराम को आज अपना दिन ही खराब लग रहा था।

बर्फानी हवाएँ सांझ का स्वागत करने के लिए मकान में दाखिल होनी शुरु हो गई थी। डोलेराम मंत्री के सहारे मात्र एक स्वैटर लेकर ही घर से निकला था। विमला ने गर्म चादर भी साथ लेने को कहा था लेकिन उस वक्त तो वह शेखी बघारता हुआ घर से निकला था,

''अरे, अपने मंत्री जी के होते हुए तू क्यों फिक्र करती है। वे मेरे लिए सारा इंतजाम करेंगें। मुझे देखते ही गले से लगा लेंगें और मुझे अपने साथ अपनी सरकारी कोठी में ठहराएंगें। अबकी बार मंत्री हमारा बना है। देखना, मैं कुछ ही समय में गाँव वालों की सारी समस्याएँ दूर करवा दूँगा। अब हमारा गाँव भी खुशहाल बनेगा।''

सर्दी से कांपते डोलेराम को विमला की गर्म कपड़ों वाली बात सर्दी की हर चुभन पर याद आ जाती। दरवाजे पर बैठा गार्ड मजे से हीटर सेंकता हुआ खैनी को आंवले की तरह धीरे-धीरे चूसे जा रहा था तथा हर आने-जाने वाले पर कड़ी निगाह रखे हुए था। जब डोलेराम से सर्दी सहन न हुई तो वह झटपट से उठा और गार्ड के पास बैठकर हीटर सेंकने लगा। इतने सारे लोगों के सामने गार्ड चाहकर भी डोले को कुछ बोल नहीं पा रहा था, लेकिन डोले गार्ड का चेहरा देखकर उसकी मन:स्थिति का अंदाजा लगा चुका था। मजबूर डोलेराम को उसकी नफरत भरी निगाहों का सामना करना पड़ रहा था।

हीटर सेंकते हुए कभी जब गार्ड और डोलेराम की नजरें मिलती तो डोलेराम सोचता कि गार्ड से ही अंदर जाने की सिफारिश करूँ क्योंकि यहाँ के हालात को देखते हुए उसे अब घर वापिस जाना ही पड़ना था। परन्तु डोलेराम हर बार गार्ड की घूरती नजरों से घबरा जाता और दोबारा चुपचाप हीटर सेंकते हुए अपनी बारी का इंतजार करने लगता।

धीरे-धीरे लोगों की भीड़ कम होने लगी थी। जब थोड़े लोग ही शेष रहे तब डोलेराम ने हिम्मत करके गार्ड से अपनी मजबूरी बयान कर दी। गार्ड ने वक्त की नजाकत को भांपते हुए डोलेराम से रुपए ऐंठे और उसे अंदर भिजवा दिया।

अंदर पहुँचते ही डोलेराम ने देखा मंत्री साहब पहले से अंदर बैठे कुछ लोगों के साथ गप्पे हांक रहे थे। डोलेराम को अंदर आते देखकर भी अनदेखा करते हुए मंत्री अपने साथियों से इस बार व्यंग्यात्मक लहजे में बोल पड़ा, ''यार, इन छोटे लोगों का यदि एक बार काम कर दें तो ये हमारे मुँह ही लग जाते हैं। हमारे साथ ऐसे चिपक जाते हैं जैसे गुड़ के साथ मक्खी। इन्हें इतनी भी तहजीब नहीं रहती कि बड़ों के साथ किस तरह से और कैसे बात करनी चाहिए। आ जाते हैं मैले-कुचैले बदबूदार कपड़े पहने, भिखारियों की तरह।''

मंत्री की बातें सुनकर डोले को एक बार फिर झटका लगा। लेकिन खुद को संभालते हुए वह बोला, ''साहिब, मैं एक गुजारिश लेकर आपसे मिलने आया हूँ। आपने चुनाव के समय मुझसे कहा था कि आप मेरे घर एक नलका लगवा देंगें। साहिब, एक नलके का इंतजाम हो जाता तो अच्छा था। पड़ोसी हमें अब अपने नल से पानी नहीं भरने देते। गालियाँ निकालते हैं। कहते हैं अपने मंत्री से अपने लिए अलग से नलका क्यों नहीं लगवा लेते?''

मंत्री अपने साथियों की ओर से ध्यान हटाते हुए बोला, ''अरे भाई, तुम क्या बके जा रहे हो? कैसे पड़ोसी? कैसा नलका? और मैंने तुम्हें नलके के लिए भला कब कहा है? मैं तो तुम्हें आज ही पहली दफा देख रहा हूँ।''

''साहिब, क्या आपने मुझे सचमुच में नहीं पहचाना?'' डोलेराम का यह प्रश्न भोलेपन से भरा था। उसे मंत्री की बात मजाक लग रही थी।

''नहीं, बिल्लकुल नहीं।'' मंत्री का सपाट-सा जवाब था। डोलेराम के पैरों तले से जैसे जमीन खिसक गई थी। दोपहर से लेकर शाम तक के हर घटनाक्रम ने डोलेराम को सब-कुछ समझा दिया था। कुर्सी मिलते ही मंत्री साहब अपनी पिछली हर बात भूल चुके थे। खासकर डोलेराम जैसे गरीब को तो बिल्लकुल ही। जिन्होंने रात-दिन एक करके, भूखे प्यासे रहकर मंत्री को यह कुर्सी दिलवाने के लिए अपनी जान की परवाह तक नहीं की थी। महीने भर में ही मंत्री का स्वभाव बदल चुका था। डोलेराम सोचने लगा, क्या कुर्सी का असर इतना भयानक होता है कि उस पर बैठने वाला शख्स अपने अतीत को ही भूला बैठता है।

डोलेराम की जुबान अब जैसे सिल सी गई थी। उसे विश्वास ही नहीं हो रहा था कि यह वही शख्स है जो चुनाव से पहले मुझे छोटा भाई कहता था! कितने ही दिन हमने इकट्ठे गुजारे हैं। उसे तो अब उसकी असलियत से परिचय हुआ था। यह वही व्यक्ति था जो उसे अपना स्वार्थ साधने तक सपनों की रंगीन दुनिया में घुमाता रहा। मंत्री ने डोलेराम के जूतों की ओर इशारा करते हुए कहा,

''और हाँ! दोबारा जब भी कभी हमसे मिलने आओ तो जूते कमरे के बाहर ही उतार कर आना। मेरा कारपेट गंदा हो जाता है। रही बात नलके की तो मैं तुम्हें एक बात बता देता हूँ। मैं एक मंत्री हूँ और ऐसे छोटे काम करने से मेरा रुतबा कम पड़ जाता है। चलो फिर भी इस काम के लिए तुम मेरे सैक्रेटरी से मिल लो। वह भी इसलिए क्योंकि तुम दूर किसी पिछड़े गाँव से आए लगते हो।'' मंत्री की बात में एक तीखा व्यंग्य था। सब बातें सुनकर डोलेराम का मन जैसे पागल होने को कर रहा था। वह यह कभी नहीं सोच सकता था कि उसे इस तरह से अपमानित किया जाएगा और उसके द्वारा किए गए परिश्रम को यूँ भुला दिया जाएगा। कुत्ता भी अपने मालिक के द्वारा किए अहसान को नहीं भूलता, फिर यह तो इन्सानों के बीच की बात थी।

चुनाव के वक्त जिस इन्सान को उसके कीचड़ से सने जूते भी दिखाई नहीं देते थे। हमारे द्वारा दी गई सत्ता के सुख में अंधा वह व्यक्ति आज उससे जूते उतरवाने की बात कर रहा था। वह पी. ए. से मिले बिना ही मंत्री की कोठी से बाहर आ गया।

गुस्से के कड़वे घूंट पीता हुआ डोलेराम विश्वासघात की पीड़ा को लेकर जब मंत्री की कोठी के बाहर निकला तो शाम घनी हो चुकी थी। वह अपने भारी कदमों को घसीटता हुआ दूधिया रोशनी में नहायी काली सड़क पर बड़ी-बड़ी गाड़ियों के नीचे अपने एक-एक अरमान को कुचलता हुआ देख रहा था। इस अजनबी शहर में अभी उसे रात के ठहरने का इंतजाम करना भी बाकी था।

-गांव व डा. महादेव, तहसील- सुन्दरनगर,
जिला- मण्डी (हि. प्र.)-१७५०१८
मोबाइल: ०९८०५४०२२४२

नशा एक अभिशाप

-सत्यपाल सिंह 'सजग'

प्यारा भारत देश हमारा, नशा मुक्त संकल्प हमारा
नशा वैर दुश्मनी कराता, कभी दिलों को नहीं मिलाता
जिस घर में हो एक शराबी, समझो उसकी हुई खराबी
जिसने आदत नशे की डाली, उसको रोज ही मिलती गाली

मंहगाई और भ्रष्टाचार, नशा बढ़ाता है व्यभिचार
जिसने बीज नशे का बोया, उसने अपना सब-कुछ खोया
मदिरा जीवन अगर बचाती, तो फिर क्यों माँ दूध पिलाती
यदि नारी ले मन में ठान, समझो हार नशा ले मान

खून पसीना भरी कमाई, मधुशाला में अगर गंवाई
कैसे पालोगे परिवार, बंद करो यह कारोबार

★

सेंचुरी पल्प एण्ड पेपर मिल्स,
लालकुआँ, नैनीताल-२६२४०२
मो.०९४१२३२९५६१

दूर कहीं कोई गाए

-डॉ. ब्रजेश कुमार मिश्र

दूर कहीं कोई गाये!
झिलमिल तारों की छाँव तले,
जाड़ों की भीगी साँझ ढले।
पेड़ों के झुरमुट से आती,
मृदु स्वर-लहरी यह मनभाती॥
मेरे मानस पर छाये।
दूर कहीं कोई गाये!

किस विरह व्यथा की पाती-सी,
किन सुधियों को दुलराती-सी।
भर कर स्वर में घन आकर्षण,
देती किसको यह आमन्त्रण॥
कौन मुझे यह बतलाए।
दूर कहीं कोई गाये!

सम्मोहन-सा मुझ पर करती,
जग को मुझसे विस्मृत करती।
स्मृतियों का कर आवाहन,
करती गुंजित मन का आंगन॥
मेरा अन्तर भी गाये
दूर कहीं कोई गाये!

-मिश्रा नर्सिंग होम, सिद्धार्थ कालोनी
आर्य समाज रोड, मुजफ़्फर नगर
मो. ०९४१२२११७६३

उगी झाड़ियाँ नागफनी की

-डॉ. सतीश चन्द्र 'राज'

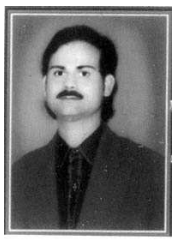

उगी झाड़ियाँ नागफनी की
आज हमारे गाँव में
पटवारी को देकर पैसे
सब अपनी ही नाप रहे
कौन किसी के आगे झुकता
सब के बड़के बाप रहे

अलग बात है छोटी चादर
लम्बे सबके पाँव।
सिलें मिर्जई अपनी-अपनी
गैरों से क्या लेना?
आस लगाकर के फूलों की
काँटे-काँटे बोना

जाए चूल्हे भाड़ में सब
सफल रहे काई दाँव॥
कह-कह करके थोड़ा पानी
ऊभ-चूभ करते सब
थाह नापने जाने वाले
कहीं नहीं दिखते अब

छिद्रों वाली लेकर देखो
चले तिराने नाव॥

-तितिक्षा', १०/३३, घोरावल,
सोनभद्र-२३१२१०, मो. ०९९५६६३५८४७

अंकित नाम तुम्हारा

-स्वर्ण रेखा मिश्रा

अलिखित पंथों पर चल मैंने
तन-मन तुम पर वारा!
जीवन के इस यज्ञकुण्ड में
मैं आहुत-सी धारा

साँसों की सरगम में तुम हो
और धड़कन की धम में
इस निर्मल मन की पाटी पर
अंकित नाम तुम्हारा।

सारा जग बेगाना लगता
सभी पराए बन बैठे
तेरे दृढ़ विश्वास अडिग पर
छोड़ दिया जग सारा

हो इस तन से दूर मगर
इस मन से दूर कहाँ हो?
मैंने तो प्रत्येक रोम का
फल-दल तुम पर वारा॥

-मो. राधा नगर, बिलग्राम चुंगी,
जि. हरदोई-२४१००१
मो. ०८५४२९९३२९७

उमा श्री

हिन्द के देरोहरम कह रहे सुनले पाकिस्तान
हुस्न अगर कश्मीर है तो फिर इश्क है हिन्दोस्तान

सच के पीछे पड़े हुए हैं थाने और अदालत
बिकता है इंसाफ जहाँ पर ये हैं दो दुकान

खाली मतपेटी-सी अब तो लगे जिन्दगी अपनी
प्यार हो गया उनका जैसे हो फर्जी मतदान

कभी मचलकर कभी उछलकर सरगम जैसी धुन में
राष्ट्रगीत का करती हैं ये नदियाँ भी सम्मान

उमाश्री की तुझसे दुआ है जग के पालनहार
इस धरती पर प्यार का हरदम जलता रहे लोबान

★

रेखा हॉस्पिटल के पास, होशंगाबाद (म.प्र.)
मो. ७५२०२९८८६५

हितेश कुमार शर्मा

छोड़कर घर को न जाया कीजिए
हर घड़ी-पल मुस्कुराया कीजिए

कोई उत्सव हो कोई त्योहार हो
अपने आँगन में मनाया कीजिए

जो भी कुछ मिल जाए वह वरदान है
मान उसका भी बढ़ाया कीजिए

अपना घर अपना ही घर है दोस्तो
यहीं दीवाली मनाया कीजिए

आपका सम्मान इसमें है 'हितेश'
अपना घर आँगन सजाया कीजिए

★

गणपति काम्पलैक्स, सिविल लाइन
बिजनौर-२४६७०१

डॉ. श्रीकान्त शुक्ल

बाँध टूटेगा अगर
डूब जाएगा शहर

आ ज़मीं पे ऐ खुदा,
आसमानों से उतर

तुम अगर हो साथ में
कट ही जाएगा सफ़र

प्यार का इक जाम पी
थूक नफरत का ज़हर

इंतज़ार! और ज़रा,
हो ही जाएगी सहर

★

बलदेव वैदिक विद्यालय
इंटर कालेज, पलियाकलां
जनपद खीरी-२६२९०२

केशव शरण

मेरा दिन कटे न जमात में, कभी ऐसा होता नहीं रहा
मुझे नींद आए न रात में, कभी ऐसा होता नहीं रहा

ये बुराइयाँ, ये लड़ाइयाँ, ये तबाहियाँ ये सियाहियाँ
जो मैं देखता हूँ हयात में, कभी ऐसा होता नहीं रहा

कभी कैसा भी वो समय रहा, बड़े मेल-जोल से हम रहे
हो विवाद बात ही बात में, कभी ऐसा होता नहीं रहा

जो बने बहुत बड़ा यार भी, जो दिखाए प्यार-दुलार भी
वही दुश्मनों के हो साथ में, कभी ऐसा होता नहीं रहा

लिए दिल में जीत की आस इक, लड़े दौर-दौर नसीब से
ये लगे कि कुछ नहीं हाथ में, कभी ऐसा होता नहीं रहा

★

एस.२/५६४, सिकरौल, वाराणसी-२२१००२
मो. ०९४१५२९५१३७

डॉ. रसूल अहमद 'सागर'

जगत में आज हाहाकार क्यों है सोचना होगा
निरीहों पर ही अत्याचार क्यों है सोचना होगा

कभी गौतम के आँगन में जहाँ अमृत बरसता था
वहीं पर बह रही विषधार क्यों है सोचना होगा

नहीं है आचरण में मित्रता का भाव अब किंचित
हमारा मर गया किरदार क्यों है सोचना होगा

चला करती थीं तलवारें जहाँ ईमानदारी से
वहीं की अब क़लम लाचार क्यों है सोचना होगा।

मनुज के प्रेम की संवेदनाएँ क्या हुईं 'साग़र'
हमारी सोच अब बेकार क्यों है सोचना होगा

★

बक़ाई मंज़िल, रामपुरा, जालौन-२८५१२७
मो. ०९४५४९०४२८०

'ऋतुराज एक पल का' का लोकार्पण

हिन्दी के मूर्धन्य गीत-कवि डॉ. बुद्धिनाथ मिश्र के भारतीय ज्ञानपीठ से सद्य:प्रकाशित, नये भवबोध के गीतों के संग्रह 'ऋतुराज एक पल का' का लोकार्पण नई दिल्ली के सुप्रसिद्ध इंडिया इंटरनेशनल सेंटर के सभागार में इंडियन ऑयल के सहयोग से मेलोडी फाउण्डेशन द्वारा आयोजित इस समारोह के मुख्य अतिथि सिक्किम के राज्यपाल और अंग्रेजी के प्रतिष्ठित लेखक श्री बाल्मीकि प्रसादसिंह थे। सम्मानित अतिथि उ.प्र. हिन्दी संस्थान के अध्यक्ष, वरिष्ठ कवि श्री उदय प्रतापसिंह तथा विशिष्ट अतिथि श्री आर.एस.बुटोला, पेट्रोनेट एनर्जी के प्रबंध निदेशक डॉ. अशोक कुमार बालयान और केंद्रीय साहित्य अकादमी के सचिव ब्रजेंद्र त्रिपाठी थे।

स्वाति तिवारी से रू-ब-रू

हरियाणा ग्रन्थ अकादमी में भोपाल से आई कथाकार स्वाति तिवारी से रू-ब-रू कार्यक्रम आयोजित किया गया। इस अवसर पर हरियाणा ग्रन्थ अकादमी के उपाध्यक्ष कमलेश भारतीय, निदेशक डॉ. मुक्ता व उर्मि कृष्ण डॉ. श्याम सखा 'श्याम', विजय कुमार, डॉ. सुरेन्द्र गुप्त, पंकज शर्मा, डॉ. सुभाष रस्तोगी, आदि मौजूद थे।

लालकुआँ में भव्य कवि सम्मेलन

छोटे से कस्बे लालकुआँ में सेंचुरी पल्प एण्ड पेपर मिल्स के स्टाफ क्लब की ओर से एक काव्य संध्या का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर कल्ब के अधिकारियों द्वारा शैलसूत्र की प्रधान सम्पादक आशा शैली, मंजू पाण्डे 'उदिता' ख्यातिलब्ध ग़ज़लकार मो. यूनुस मलिक नख्वी, डॉ. उमाशंकर 'साहिल पानीपती', मोहन 'मुन्तज़िर', विनय 'बिन्दास', मुस्तफ़ा 'माहिर', सतपाल सिंह 'सजग', राकेश चतुर्वेदी, एवं आनन्दगोपाल सिंह बिष्ट आदि आमंत्रित कविगणों को भी शॉल, सम्मानपत्र, स्मृति-चिन्ह एवं नकद राशि शाखा के चीफ आपरेटिंग ऑफिसर श्री जे.पी. नारायण जी एवं उनकी पत्नी ने अपने हाथों देकर सम्मानित किया। तीन घण्टे से भी अधिक देर तक चलने वाले इस कार्यक्रम में मंत्रमुग्ध श्रोतागण अंत तक अपने स्थान पर विराजमान रहे।

सेंचुरी पल्प एण्ड पेपर मिल्स के स्टाफ क्लब द्वारा शैलसूत्र की प्रधान सम्पादक श्रीमती आशा शैली, मंजु पाण्डे 'उदिता', आनन्द गोपाल सिंह बिष्ट, यूनुस मलिक एवं अन्य को शॉल, सम्मानपत्र, स्मृति-चिन्ह एवं नकद राशि देकर सम्मानित किया गया।

डॉ. अशोक लव को 'आचार्य विजयेंद्र स्मृति' सम्मान

सुन्दरलाल जैन सभागार, अशोक विहार (दिल्ली) में हिन्दी के वरिष्ठ साहित्यकार डॉ. अशोक लव को 'आचार्य विजयेंद्र स्नातक स्मृति सम्मान' सुप्रसिद्ध व्यंग्यकार डॉ. हरीश नवल एवं डॉ. रवि शर्मा द्वारा शॉल औढ़ाकर किया गया। आचार्य विजयेंद्र स्नात्क की सुपुत्री डॉ. सुधा नवल ने उन्हें ग्यारह हज़ार रुपए भेंट किए। इस समारोह की अध्यक्षता डॉ. कमल किशोर गोयनका ने की। 'शब्द सेतु' संस्था की ओर से यह पुरस्कार हर वर्ष दिया जाता है

विश्व हिन्दी मिशन आधारशिला कार्यक्रम

महात्मा गाँधी संस्थान मॉरीशस में सम्मान समारोह हुआ जिसमें मारीशस के कला और संस्कृति मन्त्री श्री मुकेश्वर 'चुनी' मुख्य अतिथि रहे। इस अवसर पर डॉ. करुणा पाण्डे की पुस्तक 'रामचरित मानस और रघुवंश' का लोकार्पण भी किया गया। तथा डॉ. करुणा पाण्डे को तुलसी मानस सम्मान से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर मारीशस के गणमान्य साहित्यकार उपस्थित रहे।

(द्वारका) दिल्ली में काव्यपाठ

नई दिल्ली (द्वारका) के वरिष्ठ नागरिकों की संस्था, 'सुख-दुख के साथी' की ओर से डॉ. अशोक लव की अध्यक्षता में काव्य संध्या का आयोजन किया गया। इस आयोजन के मुख्य अतिथि डॉ. हरीश नवल थे तथा संचालन प्रेमबिहारी मिश्र ने किया। डॉ. अशोक लव, डॉ. हरीश नवल, आशा शैली, स्नेह सुधा नवल, प्रेम बिहारी मिश्र, शबाना नज़ीर, कर्नल जी.सी.चौधरी, अशोक वर्मा, अनिल उपध्याय आदि की कविताओं को खूब सराहा गया। यह एक अच्छी पहल थी, सभी वरिष्ठजनों ने हर पखवाड़े अपने समय का इसी प्रकार सदुपयोग करने का निर्णय लिया।

विश्व यात्री डॉ. कामता कमलेश को विष्णु प्रभाकर स्मृति सम्मान

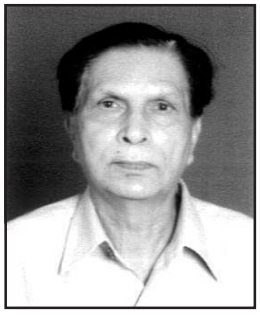

राजभाषा विभाग भारत सरकार की हिन्दी सलाहकार समिति के सदस्य एवं शैलसूत्र के संरक्षक सदस्य, मानस संगम सम्मान से सम्मानित विश्वयात्री डॉ. कामता कमलेश को उनके हिन्दी साहित्य में विशेष योगदान हेतु भारतनीय पत्रकारिता संस्थान बरेली के ३०वें वार्षिकोत्सव में रोटरी भवन के भव्य हाल में शॉल औढ़ाकर सम्मानित किया गया।

उनके साथ ही जनसत्ता के पूर्व सम्पादक, कौन बनेगा करोड़पति के विशेषज्ञ श्री राहल देव को 'सुरेंद्र सिन्हा सम्मान' से अलंकृत किया गया।

छाया देवदार की -२० -आशा शैली

अभी तक-देवदार के वृक्षों से घिरा हिमाचल प्रदेश का एक छोटा सा गाँव, हरिजन बस्ती। ग्राम्यजीवन, ऊँचे पहाड़ों के देवदारों से घिरे गाँव में रहने वाली छोटी सी लड़की बीरमा इस उपन्यास की नायिका है। इस कहानी ने जब जन्म लिया, उन दिनों सिक्ख आतंक चरम पर था। पहाड़ की रियासतें सिक्खों के प्रभुत्व में थीं। सिक्ख राजाओं की अय्याशी का शिकार भोले-भाले पहाड़ी लोग अक्सर ही हो जाते थे। और अनहोनी हो ही गई, बीरमा उठा ली गई। भोली बीरमा महल में पहुँच कर जसबीरकौर बन गई थी। उसे महल के कायदे कानून सिखाने वाली दासी दर्शनकौर, जाने-अनजाने उसके मोहपाश में बंध गई। बीरमा या जसबीरकौर समय-कुसमय गाँव की गलियों में घूमने से अपने-आप को बचा नहीं पाती। एक दिन बीरमा का अस्तित्व जसबीरकौर के आगे बौना पड़ गया, वह रानी बन गई। महल में उसने महाराज की बेटी को जन्म दिया। बूढ़े महाराजा का अन्तिम दिन भी आ गया और बिन ब्याही जसबीर विधवा हो गई। बीरमा वापस लौट आई, देवदारों की छाया में.....अब आगे पढ़ें-

इतने सारे सालों में पहाड़ों के वातावरण में काफ़ी अन्तर आ गया है। नौजवान लड़के-लड़कियों को नये ज़माने की हवा लग गई है फिर भी खेतों से लामण के स्वर बराबर सुनाई दे जाते हैं और मेले में तो आज और भी ज्यादा चाव से लोग जाने लगे हैं। पढ़े-लिखे शहरी लोग भी नाटी का मोह नहीं छोड़ सके। जब देवता के बजंत्री ढोल-शहनाई और करनाल़ के साथ अखाड़े में उतरते हैं तो नौजवान लड़के-लड़कियाँ ही नहीं बुजुर्ग भी देवता की चाँवर हाथ में लेकर अखाड़े में उतर आते हैं और नाटी का समा बंध जाता है।

गाँवों के कच्चे-पक्के घरों के बीच कहीं-कहीं कच्चे पत्थर की स्लेट वाले घरों की जगह लोग टीन की चादरें डालकर घर बनाने लगे हैं। बेचारी छोटी-छोटी पहाड़ी काली गउएँ कितनी आसानी से पहाड़ों पर चढ़-उतर कर अपना पेट भर लेती है। थोड़ा दूध देती हैं फिर भी घर में लस्सी-दूध तो हो ही जाता है जिससे गाँव वालों का गुजारा हो जाता है। यह भी अच्छा है कि अभी तक पहाड़ वालों को मैदानों की हवा नहीं लगी और वे दूध नहीं बेचते वरना तो जो थोड़ा-बहुत जीने का आनन्द है वह भी जाता रहता।

बीरमा का मन जीवन की एकरसता से ऊबने लगा था। यह क्या कि खाया और सो गए। मन में आया कि कुछ बदलाव होना चाहिए। उसके कुछ रिश्तेदार सराहन में भी रहते थे, अभी तक इस तरफ़ वही खच्चरों के चलने वाली टूटी-फूटी सड़क ही थी जो भारत को तिब्बत से जोड़ती थी। उन्हें सराहन जाने के लिए खच्चरें किराए पर मिल सकती थीं पर वे लोग तो पटियाला से आते हुए भी यहाँ तक रो-रोकर पहुँचे थे। इससे तो पैदल ही चलना अच्छा है। यही सोचकर उन्होंने गाँव से एक लड़का साथ लिया जो गुरप्रीत को गोद में उठाकर चल सके क्योंकि उससे इतनी दूर चलना हो नहीं पाएगा।

हालांकि पैदल चलना बीरमा के लिए बहुत मुश्किल था फिर भी सराहन का अपना आकर्षण बहुत बड़ा था। वहाँ भीमाकाली का बहुत बड़ा ऐतिहासिक मन्दिर है। हालांकि वह लोग मन्दिर के भीतर तो नहीं जा सकते थे परन्तु बाहर दूर से ही दर्शन कर अपने को धन्य समझते थे, फिर बीरमा जब से वापस लौट कर आई थी तब से उसके सब रिश्तेदार उसे मिलने आ चुके थे। बारी-बारी सब ही तो उसे निमन्त्रण दे गए थे, परन्तु उसका एक ही जवाब होता, ''चला नहीं जाता।'' फिर भी अब तक धीरे-धीरे उसने चलने का कुछ तो अभ्यास किया ही था। गाय को तो पहले ही उसकी माँ देखती थी उसने दर्शन और गुरप्रीत को साथ लिया और चल दी लम्बे सफर पर। इन दिनों क्योंकि अभी स्कूल भी नहीं खुले थे। वह भी फागुन के महीने में ही खुलते थे। उसे चेत्रू इलाके की गतिविधियाँ लेने का काम भी सौंप गया था। बाहर नहीं निकलती तो कैसे पता चलता कि क्या हो रहा है?

वह लोग मुँह अँधेरे घर से निकल गए थे ताकि दोपहर तक मशनू पहुँच जाएँ। यह गाँव उनके गाँव से मुश्किल से आठ-नौ मील था और वह दस बजे के लगभग वहाँ पहुँच भी गए, परन्तु अभी वह मुश्किल से खाना खाकर बैठे ही थे कि पता चला कि मशनू के एक सत्याग्रही मास्टर अणुलाल और उनकी अविवाहित

बहन सत्या जी ने उन्हें मिलने के लिए बुलाया है।

ये दोनों बहन-भाई पूरी तरह महात्मा गाँधी और जवाहरलाल नेहरू के पद-चिन्हों पर चल रहे हैं। बीरमा थोड़ी देर तक आराम करने के बाद दर्शन और गुरप्रीत को साथ लेकर उन दोनों से मिलने चली गई। बीरमा ने देखा, मास्टर अणुलाल के घर से बाहर एक अलग कमरा था जिसमें वे लोग बैठे थे। भीतर अभी तक भी कोली लोगों का जाना वर्जित था। उसे दुःख हुआ कि अभी तक उनके पहाड़ से छुआछूत दूर नहीं हुई, लेकिन समाज की जड़ों को खोखला करने वाली इस बुराई से वह अकेली तो नहीं लड़ सकती थी। चाहे यह कमरा मकान से अलग था परन्तु जब बीरमा छोटी थी तब तो कोली लोग ठाकुरों के मकान को छू भी नहीं सकते थे। कम से कम इतना तो हुआ कि अब वे उनके घर के किसी कमरे में बैठ सकते हैं। उन लोगों ने देर तक देश की राजनीति और आगे के कार्यक्रम के बारे में बातचीत की और लौट आए।

रात के खाने के बाद रिश्ते की भाभी एक बड़ी परात में गरम पानी ले आई। बारी-बारी तीनों ने गरम पानी से पैर धोकर रास्ते की थकान उतारी। घर के सब लोग बीरमा के पास आकर बैठ गए और उससे महल की बातें पूछते रहे। देर रात गए घर के लोगों ने बीरमा को सोने के लिए कहा और उठ गए। अपने सभी रिश्तेदारों के प्यार को देखते हुए बीरमा ने दो दिन बाद ही आगे जाने का फैसला किया और दो दिन के लिए वह वहीं रुक गई।

दूसरे दिन फिर सत्या बहन के घर पर बैठक जमी। मास्टर अणुलाल जी ने बीरमा को अपने यहाँ की गतिविधियों से अवगत कराया और उसे भी समाजसेवा के लिए प्रेरित करते रहे। बीरमा ने उन्हें नहीं बताया कि वह तो क्षेत्र में निकली ही इसलिए है। चेत्रू भाई उसे क्षेत्र के समाचार लेने का आदेश देकर गए हैं। रात को गाँव के लोगों ने नाटी लगाई जिसमें बीरमा से भी नाचने को कहा गया। औरतें उसे जबरदस्ती घसीटकर ले भी गईं परन्तु उसे तो नाचना भूल ही गया था। वह खाली उनके साथ चक्कर लगाती रही।

दो दिन पलक झपकते बीत गए। तब सभी रिश्तेदारों और दूसरे लोगों से विदा लेकर वह आगे बढ़ गई इस तरह उसे वापस लौटने में समय तो अवश्य लगा परन्तु अधिक थकावट नहीं हुई।

बीरमा और गुरप्रीत को तो रिश्तेदारों से ढेरों उपहार मिले ही साथ ही दर्शन भी उपहारों से लदी हुई वापस लौटी, इतना ही नहीं अपनी देई (राजकुमारी) को पहुँचाने उनके रिश्तेदार भी साथ आए थे, जो उपहारों का बोझ अपनी पीठ पर लादे हुए थे। दूसरे दिन वे लोग मुँह अंधेरे वापस लौट गए और बीरमा और दर्शन अपनी पुरानी दिनचर्या पर लौट आईं।

इस तरह यात्रा में बहुत दिन लग गए, अपने घर का सुख तो अलग ही होता है। उन लोगों को घर पहुँचते रात हो गई थी। पैदल चलने से थकान भी थी ही अतः सब लोग जल्दी ही सो गए। सुबह भी तो मुँह अँधेरे ही उठना पड़ता था। महल वाली सुविधाएँ तो यहाँ कुछ भी नहीं थीं। सुबह उठकर शौच के लिए जंगल जाना पड़ता है।

घर लौटते ही बीरमा को बिस्ने और चेत्रू की याद आने लगी। चेत्रू कह कर तो गया था कि जल्दी ही बिस्ने को लेकर लौटेगा परन्तु अभी तक उसका कुछ भी पता नहीं था। सराहन की यात्रा में भी अक्सर ही बीरमा सोचती रहती कि क्या हुआ होगा? अभी तक दोनों भाई लौटे क्यों नहीं, परन्तु आज उसने कुछ नहीं सोचा। लगातार कई दिन पैदल चलने से पैदा हुई थकान के कारण उसे कुछ भी सोचने का मौका ही नहीं मिला था और खाना खाकर वे दोनों जल्दी ही सो गई थीं।

बीरमा पटियाला से आते समय एक रेडियो भी साथ लाई थी जो बैटरी के सैल से चलता था। खच्चर वाला दुकानदार का सामान लाते समय उसे सैल ला दिया करता था। गाँव में बिजली का तो नाम भी नहीं था हाँ चेत्रू और बीरमा के घरों में मिट्टी तेल के लालटेन लैम्प जरूर थे। बीरमा को तो पता ही था कि उसके गाँव में क्या कुछ है, वह अपनी ज़रूरत का सामान ले आई थी और चेत्रू को भी शिमला की हवा लग चुकी थी।

आज दोपहर को बीरमा ने भोजन के बाद थोड़ा सुस्ताने के लिए लेटकर रेडियो आन कर गाने लगा दिए। थोड़ी देर तक वह रेडियो सुनती रही फिर उसने रेडियो का स्विच आफ़ किया और पैर सीधे कर सोने

का प्रयास कर ही रही थी कि उसके कानों में लामण का स्वर पड़ा, इस लामण को वह कैसे भूल सकती थी? बिस्ना इसी लामण को तो अधिक गाया करता था, बड़े दर्दीले स्वर में कोई गा रहा था।

''मुलै आए नाणीए...ऽ...ऽ...ऽ...मेरे आगे.. .ऽ...ऽऽ..., सुख सारोंअ।

खुडा दी पाणीआ...ऽ...ऽ...ऽ...बोड़ी...ऽ... ऽऽ...लागदीऽऽ..धौंअ''

(हे प्रिये मुझसे ही विवाह करना, क्योंकि मेरे घर में सारे सुख हैं। मेरे घर की पशुशाला में जलस्रोत है इसलिए तुम्हें पानी लेने दूर नहीं जाना पड़ेगा और बरामदे में ही धूप लगती है इसलिए घर गर्म रहता है।)

''दुसै दपोरीए..ऽ...ऽ...ऽ... भेडा आगा..ऽ...ऽ.. .ऽ...नाणिए आओ।

पागा मेरी उजली..ऽ...ऽ...ऽ...फूला सपाड़ेओ.. ऽ...ऽ...ऽ..लाओ॥''

(हे प्रिय, मैं भरी दोपहरी में भेड़-बकरियों के पास से आया हूँ। तुम देख रही हो मेरी उजली पगड़ी और पगड़ी में सपालू (जंगली-सर्पगन्धा) का फूल लगा है।

''एता लै भाउणी..ऽ...ऽ...ऽ...लाटी कनावरी . .ऽ...ऽ...ऽ...नाणी।

पाणीए आमणे..ऽ...ऽ...ऽ...शिऊ देआ तुम्बी दी..ऽ...ऽ...ऽ...आणी॥

(इसीलिए मुझे कनावरी (किन्नर देश की युवती) प्रेमिका पसन्द है कि वह पानी के बहाने तुम्बड़ी में मदिरा लाकर दे देती है।)

बस, जसबीर का खोल उतारने के लिए दूर की धार से आती लामण की वह आवाज़ ही काफ़ी थी। वह एक झटके में उठकर दरवाजे पर आई। इन लामणों को वह लाखों में भी पहचान लेती। तीसरा लामण वह उसे चिढ़ाने के लिए गाया करता था। वह सोच रही थी, यह आवाज़ बिस्ने के अलावा और किसकी हो सकती है? मन चाह रहा था कि भागकर वहाँ जा पहुँचे जहाँ से आवाज़ आ रही थी, लेकिन नहीं, क्या ज़रूरी है कि यह बिस्ना होगा। वह यहाँ कहाँ है? फिर मन ने उत्तर दिया कि वह इतने दिन घर में थी ही कहाँ, क्या पता चेत्रू दाद आ ही गए हों उसे लेकर।

मन ने तर्क किया लेकिन उसे गाँव में किसी ने बताया भी तो नहीं। उत्तर मिला, परन्तु वह भी लौटने के बाद अभी किसी से कहाँ मिली है। बस अम्मा ही तो आई थी दूध लेकर। अब इस बात का निश्चय कैसे हो कि वह बिस्ना ही है? वह कोई और भी तो हो सकता है। इन लामणों पर क्या बिस्ने का एकाधिकार है? बिस्ना की आवाज़ क्या अब वह बचपन की आवाज़ हो सकती है? पागल हो बीरमा तुम भी। यह तो किसी भरपूर मर्द की आवाज़ है। इसी ऊहापोह में भटकती अपने मन से खुद ही सवाल करती और खुद ही जवाब देती बीरमा को अपने आप पर गुस्सा भी आने लगा और तरस भी। क्या करे वह? आख़िर किस से पूछे कि लामण गाने वाला कौन है? रानी जसबीरकौर भाग कर वहाँ नहीं पहुँच सकती थी, जहाँ से लामण की आवाज़ आई थी। इतने लम्बे-लम्बे साल महल में गुज़ार कर उसका शरीर जसबीरकौर का हो चुका था।

वह धम्म से चौखट पर ही बैठ गई। जसबीरकौर लामण की गर्मी से पिघल कर बहने लगी और बीरमा ने उनींदी आँखों मलकर लामण का उत्तर देने के लिए मुँह खोला लेकिन जसबीरकौर ने झट से उठकर उसका गला दबा दिया। बीरमा के गले से आवाज़ तो क्या निकलती उसके बदले आँखों से आँसू बह निकले। आख़िर उन पर तो किसी का प्रतिबंध नहीं था, न समाज का और न जसबीर का। महाराज तो अब वैसे भी उस पर क्या प्रतिबंध लगाते।

जसबीर आज अपने आप में इतनी अधिक गुम थी कि उसे पता भी नहीं चला कि कब दर्शनकौर उसके पास आकर बैठ गई थी, ''जसबीर! क्या हुआ बेटा? क्यों रो रही है?''

''मासी, यह लामण...'' उसने बात आधी छोड़ दी।

''हाँ सुन रही हूँ और समझ भी रही हूँ। पर क्या यह जरूरी है...''

''हाँ मासी! मैं भी यही सोच रही हूँ। यह कोई और भी हो सकता है। अगर चेत्रू दाद आए होंगे तो वे खुद ही मुझे आकर बता देंगे।''

''हाँ, यही तो मैं कह रही थी। वाहेगुरु तुझे

पटियाला से वापस ले आए हैं तो आगे भी ठीक ही होगा। हौसला रख।''

अभी ये लोग अपनी बात खतम ही कर पाए थे कि चेत्रू आता दिखाई दे गया। ''ले आ गया तेरा भाई भी। मैं अन्दर से कुर्सी लाती हूँ।'' और वह उठकर भीतर चली गई।

चेत्रू ने आते ही कहा, ''बीरमा, जल्दी से बढ़िया सी मीठी चाय पिला। मैं तेरे लिए उपहार लाया हूँ।''

''सच?'' बीरमा का चेहरा खिल उठा।

''तूने सुना नहीं, वह गा रहा था।''

''हाँ दाद! सुना तो है पर यही सोचा कि क्या जरूरी है कि वही हो।''

''पर मैंने उसे तेरे बारे में नहीं बताया। अचानक ही उसे तेरे सामने खड़ा कर दूँगा तो वह हैरान हो जाएगा, है न? शाम को लेकर आऊँगा।''

''पर...''

''क्या पर?''

''कहीं उसके दिमाग़ पर असर तो नहीं पड़ेगा? शायद जसबीर यही सोच रही है।'' मासी चाय लेकर आ गई थी।

''नहीं, मैं ने उसे रास्ते में इसी की बातों में उलझाए रखा था और यह भी कहा कि यदि बीरमा वापस लौट आए तो तुम क्या करोगे? तो वह मेरा मुँह ताकने लगा था।'' चाय पीकर चेत्रू जाने के लिए उठ खड़ा हुआ। ''बीरमा, बादल आ गए हैं। हो सकता है कि बारिश हो जाए। मैं चलता हूँ।''

''बिस्ना अभी कहाँ है?'' दर्शन ने पूछ लिया।

''वह पास के गाँव गया हुआ है। हो सकता है शाम तक आ जाए या फिर सुबह ही आए। अगर उसे तुम्हारा पता होता तो शायद वह वहाँ जाता ही नहीं। मैंने आते ही तुम्हरा पता किया परन्तु तुम तो गाँव ही में नहीं थीं।''

''तुम्हीं ने तो कहा था मशनू जाने के लिए।'' बीरमा रुआंसी हो उठी।

''हाँ! कहा तो मैंने ही था। क्या तुम्हें मास्टर अणुलाल मिले थे?''

''हाँ, वे और सत्या बहन दोनों ही थे घर पर और मुझे समाज सेवा में आने को कह रहे थे। मैंने मना कर दिया। पर तुम्हारे दिए काम के बारे में उन्हें नहीं बताया। क्या मैंने कुछ गलत किया?''

''वैसे तो गलत भी नहीं किया फिर भी उन्हें मेरी गतिविधियों का पता ही है और हम भी उनसे कुछ नहीं छिपाते। फिर भी तुम यह बताओ कि क्या बच्चों को विद्या दान देना समाज सेवा नहीं है?''

''बेटा, तुमने बिस्ने से बीरमा के लौट आने की बात क्यों नहीं की?'' मासी ने उन्हें विषय बदलते देखकर टोक दिया।

''उसकी दिमाग़ी हालत को देखते हुए मैंने भी धीरे-धीरे बताना ही ठीक समझा।'' फिर थोड़ा रुक कर बोला ''अच्छा, चलता हूँ।'' कहकर चेत्रू उठकर चल दिया। ☐

-क्रमशः

नई कलम

गुजारिश

-श्रीमती प्रियंका पाठक

ये मुसाफिर करे है गुज़ाररिश, 'खुदा!'
ऐसी राहों का हमको तू दे दे पता,
जो हरेक की ही हो आरजू और दुआ।
उस गुलिस्तां का है बस तुही रहनुमा।
वो राहें, जो उजालों को बढ़ती रहें,
जुस्तजू भी हो सबकी तमन्ना भी हो
आशियाँ दे वह जिसकी इबादत भी हो
इक हकीक़त भी हो और सदाक़त भी हो
हों वो राहें जो नेकी की मंज़िल की हों
और जो मंज़िल भी हों और खुशियाँ भी हों।।
ऐसी राहों का हमको तू दे दे पता,
ऐसी राहों का हमको तू दे दे पता।।

-१/३०९, विकास नगर, लखनऊ
मो. ९५५४६६६६०६

पत्रिका की नमूना प्रति मंगाने के लिए 20/- के डाक टिकट भेजें। -सम्पादक

खुला पत्र -जय प्रकाश तापड़िया

प्रियवर/आदरणीय

यदि कोई पूछे कि भारत की सबसे बड़ी समस्या क्या है तो आप कहेंगे, 'गरीबी, भ्रष्टाचार, अशिक्षा, जनसंख्या आदि। आपका उत्तर ठीक ही है, पर इन समस्याओं का ग्राफ देखें तो स्पष्ट होगा कि देश में कुशासन के बावजूद ये समस्याएँ कम होने या हल होने की तरफ जा रही हैं। भारत प्रगतिपथ पर बढ़ रहा है। भारत आर्थिक रूप से समृद्ध बन जाएगा, विकासशील न रहकर विकसित देश बन जाएगा, विश्व की महाशक्ति भी बन जाएगा और ये समस्याएँ समाप्त भी हो सकती हैं, परन्तु एक ऐसी गम्भीर समस्या है जो हल होने के बजाय विकराल रूप से बढ़ रही है। शीघ्र ही वह इतनी गहरी जड़ पकड़ लेगी कि उसके सामने हम सब घुटने टेक देंगे। उससे बाहर निकलने की गुंजाइश नहीं बचेगी।

वह समस्या क्या है? वह समस्या है देश भर में मीडिया द्वारा फैलाई जा रही अश्लीलता। अखबार, पत्रिकाएँ, टी.वी. फिल्में, होर्डिंग, पोस्टर सभी स्त्री शरीर को एक आकर्षक एवं लुभावनी मिठाई के रूप में परोस रहे हैं और इस मिठाई का मानसिक सेवन करने में जनता की झिझक दूर कर रहे हैं। विवाह पूर्व व विवाहेत्तर सेक्स का पाठ हमारी नई पीढ़ी को नियमित पढ़ाया जा रहा है। नतीजा यह होना शुरू हो गया है कि विवाह की जरूरत ही नहीं रहेगी। 'लिव इन रिलेशनशिप' ही बचेगा।

वैवाहिक जीवन का स्थायित्व व सुख, जो आज भारत के दरिद्र को भी प्राप्त है, वह यूरोप और अमेरिका को नसीब नहीं है। पति-पत्नी का आपसी विश्वास का सुख अब कुछ सालों तक ही बचा हुआ दीखेगा।

एक अमेरिकन के मन में हसरत ही रह जाती है कि काश उसे एक वफादार पत्नी मिल जाती। वह अमेरिकन यह नहीं देख पाता कि वह खुद कहाँ वफादार है? वैसी ही स्थिति एक आम भारतीय आदमी की भी हो जाएगी। यानि भारत समृद्ध हो जायेगा। शक्तिशाली भी हो जायेगा पर सुखी होने के बजाय घोर दुखी होगा। हर व्यक्ति अकेला महसूस करेगा। सन्तान अनाथ एवं असुरक्षित हो जायेगी।

आपको भी लगेगा कि यह वास्तव में एक गम्भीर खतरा है। यदि हम तुरन्त कुछ नहीं करेंगे तो आगे की पीढ़ी हमें कोसेगी!! हम में से अनेक लोगों ने इस पर सोचा है पर निराश हैं कि हम अकेले कुछ नहीं कर सकते। पॉवरफुल मीडिया से कैसे टक्कर लें?

यदि आपका सहयोग प्राप्त हो जाए और हम सब संगठित होकर काम करें तो हम मीडिया को नियन्त्रण में लाकर उसे सही दिशा दे सकते हैं।

-वास्तुशिल्प, प्रथम तल, गामादिया कालोनी रोड, तारादेओ, मुम्बई-४००००७, मो.०९९२०४१५४४४ E-mail iapt@taparia.com

संघर्ष

. . . ठाकुर स्नेहा सिंह

कभी-कभी संघर्ष इतना लम्बा
खिंच जाता है कि
थकान होने लगती है
पलकों के आँगन में
निराशा झलकने
लगती है
मगर
भीतर से
फिर एक आवाज़ आती है
रुकना नहीं
थकना नहीं
बढ़ते रहो....बढ़ते रहो
मंज़िल कभी तो हाथ आएगी
हार! जीत में बदल जाएगी
मेहनत का रंग
इतना पक्का और उज्जवल होता है
कि निराशा की बदली को
चीरकर एक दिन
सामने आ जाएगा सवेरा।
कभी-कभी संघर्ष
जो इतना लम्बा खिंच जाता है
वह सुखद और सुन्दर परिणाम लाता है

स्नेहा सिंह परिहार, द्वारा-ए.पी.गुप्ता, मु. छोटा रमाना, चरखारी-२१०४२१, जिला महोबा

ये बतलाने की कृपा करेंगे आप?

-राजीव तनेजा

मान्यवर नेता जी,

प्रणाम!

एक बार फिर से चुनाव में विजयी होकर हमारे क्षेत्र का पुनः प्रतिनिधित्व करने के लिए आपको बहुत-बहुत बधाई। आपकी पुरजोर कोशिशों के चलते ही इलाके में तीन किलोमीटर लम्बे फ्लाई ओवर एवं सब-वे का निर्माण सम्भव हो पाया.... जिससे क्षेत्र की जनता को हर दिन घण्टों तक लगने वाले जाम से मुक्ति मिल गई है। अपने क्षेत्र की जनता पर किए गए आपके इस अहसान के बदले हम सदैव आपके ऋणी रहेंगे, लेकिन एक जिज्ञासु एवं जागरूक मतदाता होने के नाते मेरे दिमागी भंवर में आपकी नेतृत्व क्षमता को लेकर कुछ प्रश्न मंडरा रहे हैं। 'राइट ऑफ इंनफारमेशन कानून' के तहत मैं उनका उत्तर आपसे जानना चाहूँगा, उम्मीद है आप मुझे निराश नहीं करेंगे।

-आपने हमारे यहाँ की कच्ची गलियों को कंक्रीट की बनवाकर हमें कीचड़ एवं बदबू भरे माहौल से मुक्ति दिला दी...इसके लिए हम आपके आभारी हैं लेकिन इन गलियों के कच्चे से पक्के होने के प्रकरण में आपके कितने घर पक्के हो गए, यह बतलाने की कृपा करेंगे आप?

-आप अच्छी-भली स्ट्रीट लाइटों को खम्बों समेत बदलवा कर उनका नवीकरण कर रहे हैं, अच्छी बात है लेकिन उन पुराने खम्बों का क्या होगा? मेरा मन कहता है कि पुरानी चीज़ों को सम्भाल कर रखना बेवकूफी है, अगर मैं ठीक कह रहा हूँ तो उन्हें किस कबाड़ी को और कितनी रकम में बेचा जाएगा? उसमें आपका और आपके मातहतों का कितना हिस्सा होगा? यह बतलाने की कृपा करेंगे आप?

-आपकी छत्रछाया में हमारे इलाके की सड़कों... फुटपाथों एवं कूड़ेदानों के नवीकरण के जरिए शहर का सौंदर्यीकरण हो रहा है। इस सारे प्रकरण में आप कितने नोट तिजोरी के अन्दर करेंगे? ये बतलाने की कृपा करेंगे आप?

-आपके सतत प्रयासों से हमारा इलाका साफ-सुथरा एवं सुन्दर बनता जा रहा है...इसके लिए आप प्रशंसा के पात्र हैं। इसी बात को जानकर यहाँ पर सफाई कर्मचारियों ने हाज़री लगाना लगभग बंद-सा कर दिया है। उनकी गैरहाज़री के बदले आप कितनी रकम अपनी तिजोरी के अन्दर करते हैं....ये बतलाने की कृपा करेंगे आप?

-आप जमीन से जुड़े हुए नेता हैं, इसलिए आपके राज में रेहड़ी-पटरी एवं खोमचे वाले खूब फल-फूल रहे हैं। उन्हें इस पूरे इलाके को नर्क बनाने की छूट देने के बदले आप उनसे कितना और कब-कब वसूलते हैं...ये बतलाने की कृपा करेंगे आप?

-आपके इलाके में खाली पड़ी निजी एवं सरकारी ज़मीन पर कब्जा कर झुग्गी माफिया (गरीब-गुरबा बेघर लोगों को छत प्रदान कर पुण्य का काम करते हुए) लाखों-करोड़ों के वारे-न्यारे कर रहा है। शहर का मुखिया होने के नाते इसमें आपका कितना बड़ा हिस्सा है? ये बतलाने की कृपा करेंगे आप?

प्रश्न तो अभी दिल में कई हैं लेकिन एक साथ इतने प्रश्नों का उत्तर देने से उत्पन्न होने वाली दुविधा को समझते हुए मैं अपने इस पत्र को यहीं विराम देते हुए आपसे एक अंतिम निवेदन करना चाहता हूँ, कि आपने सारे शहर में जो अपने आदमकद पोस्टर लगवाए हैं उनसे आते-जाते लोगों का ध्यान बंटने के कारण दुर्घटनाओं की सम्भावना बढ़ रही है। आप से निवेदन है कि इन्हें पूरे शहर से हटवाकर इसके बजाए किसी प्राइम लोकेशन पर अपना सिर्फ एक आदमकद पोस्टर लगवाएँ, ताकि शहर साफ-सुथरा रहे और लोगों को आप पर थूकने में किसी किस्म की असुविधा भी न हो।

अपने अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति सचेत एवं जिम्मेदार नागरिक

जयहिन्द

-ई-१७३, शालीमार बाग,
दिल्ली-११००८८, मो. ९८१०८२१३६१

शुक्र ग्रह

शुक्र ग्रह का औसतन तापमान ४६४ डिग्री सैल्सियस है। इसकी तुलना में पृथ्वी का औसत तापमान १४/१५ डिग्री सैल्सियस और बुध का तापमान ३०० डिग्री सैल्सियस है। शुक्र के इतना गर्म होने का सबसे बड़ा कारण इसके वातावरण में ९६ प्रतिशत तो कार्बनडाई-आक्साइड का पाया जाना है। गौर करने की बात है कि कार्बनडाई-आक्साइड एक ग्रीनहाउस गैस है।

यूरोपीय अंतरिक्ष एजेंसी के अंतरिक्ष यान वीनस एक्सप्रेस से प्राप्त चित्रों से ज्ञात हुआ है कि शुक्र ग्रह की सतह के करीब १२५ किमी. ऊपर की परत में तापमान बहुत कम है। वैसे हम सब जानते हैं कि सूर्य से दूरी के हिसाब से दूसरे नम्बर का यह ग्रह बहुत गर्म है। सच तो यह है कि वह सूर्य के सबसे निकटतम ग्रह, बुध से भी ज्यादा गर्म है। मगर अब यह बात भी गलत सिद्ध हो गई है।

यूरोपीय अंतरिक्ष ऐजेंसी की नई खोज ने बताया है कि वायुमण्डल के बीच कहीं एक पट्टी है, जहाँ तापमान बहुत ही कम अर्थात् शून्य से १७५ डिग्री सैल्सियस नीचे है। सम्भावना तो यह है कि इस पट्टी में ठोस कार्बनडाई-आक्साइड पाई जाएगी। इतना कम तापमान तो पृथ्वी पर कहीं भी नहीं पाया जाता। भीषण गर्मी के कारण शुक्र ग्रह पर जीवन की सम्भावना शून्य है, मगर अत्यन्त कम तापमान की पट्टी का पाया जाना एक नई सम्भावना को जन्म दे रहा है। वीनस एक्सप्रेस के वैज्ञानिक 'हॉकन स्वेदन हेम' का कहना है कि यह ठंडी परत एकदम अनोखी है। मंगल या पृथ्वी पर ऐसी कोई चीज़ नहीं पाई जाती। उन्होंने कहा, 'यह खोज एकदम नई है और अभी बहुत कुछ समझना बाकी है। बहरहाल शुक्र ग्रह के विषय में यह बात अवश्य है कि वह चौंकाता ही रहता है।

-(अजीत समाचार से साभार)

पिंकू

-सुश्री कोमल दिवाकर

एक सुअर का नाम पिंकू था, उसकी मम्मी ने कहा, ''आज खेलने मत जाओ। आज तुम्हारी मौसी आ रही है।'' लेकिन वह नहीं माना और बाहर चला गया। उसने कहा, ''मैं मौसी के जाने से पहले आ जाऊँगा।'' वह नए कपड़े पहन कर चला गया।

वह आँखें बंद करके जा रहा था। वह झाड़ियों में गिर गया। उसने अपने कपड़े झाड़े, फिर आगे चल पड़ा। अचानक सामने एक नदी आ गई। उसने छलांग मारी वह नदी में गिर गया। वह चिल्लाया, ''बचाओ...बचाओ।'' किसी को न पाकर उसने बड़ी मुश्किल से नदी पार की। उसने फिर छलांग लगाने की कोशिश की, लेकिन वह फिर गिर पड़ा। तभी वहाँ से एक हाथी जा रहा था। उसने पिंकू को नदी पार करवा दी।

घर पहुँचने पर उसने अपनी मम्मी से पूछा, ''मम्मी, मौसी कहाँ है?'' तो उसकी मम्मी ने कहा, ''वह तो चली गई पर तुम कहाँ थे? उन्होंने तुम्हारे लिए बहुत इंतज़ार किया और तुम तो भीगे हुए हो, चलो अन्दर, कपड़े बदल लो।'' उसे मौसी के चले जाने का बहुत दुःख हुआ। उस दिन से पिंकू किसी भी मेहमान के आने पर कहीं नहीं जाता।

-कक्षा-८, रोल नं.-६, राजकीय कन्या उच्च विद्यालय, कठघरिया (हल्द्वानी)

प्राप्त पुस्तकें

खिड़कियों पर टंगे लोग (लघुकथा संग्रह) डॉ. अशोक लव
लड़कियाँ छूना चाहती हैं आसमान (कविता संग्रह) उपरोक्त
अनुभूतियों की आहटें (कविता संग्रह) उपरोक्त
नील नदी की सावित्री (यात्रा वृत्तांत) ललित सुरजन
गूँजते खण्डहर (उपन्यास) डॉ. महेंद्र शर्मा 'सूर्य'
कष्ट सहो जो उपजें गीत (इंदौरा-हिमाचल के कांगड़ा जिले की एक पाठशाला के विद्यार्थियों के उद्गारों का सचित्र संग्रह) राम स्वरूप शर्मा 'परवाज़ नूरपुरी'
दायरों के पार (ग़ज़ल संग्रह) लक्ष्मी खन्ना 'सुमन'
दोहा सागर तट सुने (दोहा संग्रह) उपरोक्त

भारत में आज स्थानीय बोलियों में प्रचुर मात्रा में साहित्य सृजन हो रहा है। पत्रिका शैलसूत्र चूँकि वर्तमान समय में उत्तराखण्ड के साहित्य जगत में अपना विशेष स्थान रखती है। अतः क्षेत्रीय पाठकों की माँग पर हमने इस अंक से कुमाऊंनी का स्तम्भ शुरू किया है। अन्य क्षेत्रों के पाठकों की सुविधा के लिए कुमाऊंनी रचनाओं का हिन्दी अनुवाद साथ दे रहे हैं। इस स्तम्भ पर हम पाठकों की राय की अतिरिक्त अपेक्षा करेंगे। –प्र. सम्पादक

सुणोन सबोंकि करण आपण मनकि

–डॉ. जयदत्त उप्रेती
(पहरू से साभार)

एक बखतकि बात छू, शिवज्यू और पार्वतीं आपण आश्रम बटि ऋषि-मुनियोंकि आध्यात्मिक काथ सुणना लिजी आपण वाहन, नादिया में सवार है बेर प्रस्थान करण फैट। रस्त में कुछ दूर जै सका छी कि कुछ लोग उननकें देखि बेर उनरि खोट काटणि करते आपस में कौण लाग, ''यो जोगि कैं देख छा? बल्दाक पुठ में अघिल बै भैरौ, घरवालि कें पछिल भैटै रखो।'' यो बात शिवज्यूल सुणि हालि। झट्ट पार्वती थैं कौ, ''हँवै यस करनूं, मैं उतरि बेर नादियाक पुठ में पछिल बै भैट जानू। तू पुठ में थ्वाड़ अघिल सरकि जा।'' पार्वतील तसै करौ कै। शिवज्यू बल्दाक पुठ में है उतरि बेर फिर पार्वतीक पछिल बै भैटि गै।

कुछ दूर चलि सकी तो फिर हिटो बटौनाक मुख बै उनूल सुण, ''देख छा! कदुक निर्दयी यों स्यैंणि-बैग छन। द्वि-द्वि सवारी गरीब बल्दाक पुठ में भै रई। इनन कें शरम लै नि उनै।''

अब शिवज्यूल पार्वती थैं कौ, ''देवी! हम द्वियै उतरि जानूं, दुनियाकि बदनामी है बचण चें।'' यदुक कै बेर शिव पार्वती द्वियै जाणि नादिया में है उतरि बेर नादी कें अघिल करि बेर वीक पछिल बै आपूं पैदल चलण फैट। जानै-जानै फिर कुछ लोग बाट में आपस में क्वीड़ करण फैट, ''यों बेअकलिक ज्वे-खसमण कें देखों धैं, भलि-भलि सवारी है बेर लै वी कैं छाड़ि वीक पछिल पैदलै हिटण लागि रई।'' यो बात शिव-पार्वती कान में पड़ि गै। तब शिवज्यू हैरान है बेर बुलाण, ''हे भगवान! आब कि करनूं? कदुकै मनकसि लोगनकि करौ, तब लै के न के ट्यक लगौण यों न छाड़न।

यो संसार हैं कैकि सकाइ न्हैं। हिट पार्वती! आब मैंसौं कि मनकसि करण छोड़ि बेर आपण बुद्धि कैं जस ठीक लागूं, उस करनूं। चल नादियाक पीठ में पैलियांकी चारि भैटि बेर हमूल चलण चैं। यो बात लै भविष्य में गांठ पाड़ि ल्हिण चैं कि 'सुणनि सबोंकि, करणि आपण मनकि।'' योई सिद्धांत सुख-शांतिक लिजी जिन्दगी में अपनोंण चैं सबन कैं।

–तल्ला थपलिया, अल्मोड़ा

अनुवाद

–मंजू पाण्डे उदिता

सुनो सबकी करो अपने मन की

एक समय की बात है कि शिवजी और पार्वती ने ऋषि-मुनियों की आध्यात्मिक कथा सुनने के लिए अपने आश्रम से अपने वाहन नादिया बैल पर सवार होकर प्रस्थान किया। राह में कुछ दूर चलने पर लोगों की फुसफुसाहट शिवजी को सुनाई पड़ी, ''इस जोगी को तो देखो जरा, बैल की पीठ पर स्वयं आगे से बैठा है और पत्नी को पीछे बैठाया है।''

शिवजी ने कहा, ''पार्वती, ऐसा करते हैं, मैं उतर कर नादिया के पीछे बैठ जाता हूँ और तुम आगे बैठो।'' पार्वती ने ऐसा ही किया। स्वयं सरक कर आगे हो गई और शिवजी पीछे बैठ गए।

अभी कुछ दूर चले ही थे कि फिर राहगीरों को कहते सुना, ''देखो, ये पति-पत्नी कितने निर्दयी हैं। दो-दो सवारी बेचारे बैल की पीठ पर सवार हैं। इन्हें शर्म ही नहीं आती है।''

अब शिव-पार्वती से बोले, ''हम दोनों उतर जाते हैं। दुनिया की बदनामी से बचना चाहिए।'' इतना कहकर वे दोनों बैल की पीठ पर से उतर गए

और उसके पीछे-पीछे चलने लगे। अभी थोड़ी ही दूर गए होंगे कि फिर आवाजें सुनाई पड़ने लगीं, ''अरे! ये पति-पत्नी कितने बेअक्ल हैं। अच्छी-खासी सवारी होते हुए भी बेवकूफ पैदल चल रहे हैं। शिवजी के कान में ज्यों ही ये शब्द सुनाई दिए वे आश्चर्य चकित होकर बोले, ''हे भगवान! कितना भी लोगों के मन की करो, तब भी कोई न कोई उलाहना मनुष्य देना नहीं छोड़ेगा। इस संसार से कोई नहीं बच सकता। सबको संतुष्ट करना बड़ा कठिन है। चलो पार्वती, अब लोगों के मन के अनुसार न चलकर अपनी बुद्धि से जो उचित प्रतीत हो, वही करें। चलो नादिया की पीठ पर पहले की भांति तुम और हम बैठें और आगे बढ़ें। पर एक बात भविष्यत के लिए गाँठ बांध लेनी चाहिए, कि **'सुनो सबकी, पर करो अपने मन की।''** ज़िन्दगी में सुख-शान्ति के लिए सबको यही सिद्धांत अपनाना चाहिए।

-ए./२८, जज फार्म, छोटी मुखानी,
हल्द्वानी जिला नैनीताल, मो.९५३६५१०५०१

डॉ. अहिल्या मिश्रा को सम्पादक शिरोमणि सम्मान

साहित्य मण्डल नाथद्वारा, (राज.) में आयोजित पाटोत्सव ब्रजभाषा समारोह में देशभर से पधारे विद्वानों, साहित्यकारों एवं सम्पादकों का अभिनन्दन किया गया। यहाँ जारी प्रेस विज्ञप्ति के अनुसार हैदराबाद से प्रकाशित होने वाली हिन्दी पत्रिका 'पुष्पक' की प्रधान सम्पादक डॉ. अहिल्या मिश्र को साहित्य मण्डल के प्रधानमंत्री भगवती देवपुरा व राजस्थानी ब्रजभाषा अकादमी के अध्यक्ष सुरेंद्र उपाध्याय की अध्यक्षता में राज. हिन्दी साहित्य सम्मेलन जयपुर के महामंत्री डॉ. विष्णुचन्द्र पाठक के आतिथ्य में शिरोमणि सम्मान से सम्मानित किया गया।

सच्चा साधु

-शिवम् वर्मा

एक बार एक शिष्य भगवान बुद्ध के पास जाकर बोला, ''भगवन् मैं देश में घूमना चाहता हूँ आपका आशीर्वाद चाहिए।''

बुद्ध ने कहा, ''देश में अच्छे व बुरे दोनों प्रकार के लोग हैं। बुरे लोग तुम्हारी निन्दा करेंगे, गालियाँ देंगे। तुम्हें कैसा लगेगा?''

''मैं समझूँगा कि वे बड़े भले हैं, क्योंकि उन्होंने मुझ पर धूल नहीं फेंकी।'' शिष्य ने उत्तर दिया।

''यदि कुछ लोगों ने धूल भी फेंक दी और थप्पड़ भी मार दिया तो?''

''मैं उन्हें भी भला ही मानूँगा, क्योंकि उन्होंने हथियार से तो नहीं मारा।'' शिष्य फिर बोला

''देश में डाकू भी मिल सकते हैं, जो हथियार से तुम्हारी खबर ले सकते हैं।''

''तो क्या हुआ'', शिष्य ने कहा, ''मैं उन्हें दयालु ही समझूँगा, क्योंकि उन्होंने मुझे जिन्दा तो छोड़ दिया।''

''वे तुम्हें मार भी सकते हैं।'' बुद्ध बोले।

''इसके लिए मैं उनका अहसान मानूँगा। संसार बड़ा ही दुखमय है। बहुत दिन जीने से दुख ही दुख झेलना पड़ता है। आत्महत्या करना महापाप है, ऐसी स्थिति में यदि कोई दूसरा मारे तो उसका उपकार ही होगा।'' शिष्य बोला।

शिष्य के सारे उत्तर सुनकर भगवान बुद्ध को बहुत हर्ष हुआ और उन्होंने उसे आशीर्वाद देते हुए कहा, ''सच्चा साधु वही है जो किसी भी अवस्था में किसी बात का भी बुरा नहीं मानता। तुम जाओ, देश में घूमो-फिरो और देखो।

-श्री जी निवास, जैन कालोनी, जवाहर मार्ग, नागदा जं. (म.प्र.)-४५६३३५

अमेरिकन हिन्दू यूनिवर्सिटी ने एक शोध के बाद बताया है कि संस्कृत वह भाषा है, जो अपनी पुस्तकों वेद, उपनिषदों, श्रुति, स्मृति, पुराणों, महाभारत, रामायण आदि में सब से उन्नत प्रौद्यौगिकी रखती है (संदर्भ रशियन यूनिवर्सिटी) यह विवरण शान्तिधर्मी मासिक पत्रिका ने फेस बुक से प्राप्त जानकारी के आधार पर दिया है।

चित्र-विचित्र आकृतियाँ कहती हैं इतिहास -डॉ. विजय पुरी

'भारत दर्शन' का प्रारम्भ हमने उत्तराखण्ड राज्य के परिचय से किया। हमारी चेष्टा रहेगी कि शैल-सूत्र के पाठकों को किसी भी राज्य का अधिक से अधिक और सुरुचिपूर्ण परिचय हम दे सकें। आशा करते हैं कि हमारे सुधि पाठकों के लिए यह सामग्री रोचक और ज्ञानवर्धक होगी। पिछले अंकों में हमने उत्तराखण्ड का भौगौलिक, सांस्कृतिक, तीर्थ एवं पर्यटन का परिचय दिया, जिसमें थारु जनजाति का परिचय विशेष था। उत्तराखण्ड के कुछ सुप्रसिद्ध व्यक्तित्वों के द्वारा छेड़े गए सल्ट आन्दोलन एवं स्वतंत्रता संग्राम की अग्रणी नारीशक्ति एवं लेखक पत्रकारों के, पर्वतीय संस्कृति और लोकवाद्यों बारे में और मन्दिरों के बारे कुछ जाना। हमारा विचार था कि दो चार अंकों में यह सामग्री समाप्त हो जागी किन्तु यह हमारा मात्र भ्रम था। पिछले पाँच वर्षों से लागातार उत्तराखण्ड पर सामग्री उपलब्ध हो रही है और हमें लग ही नहीं रहा कि यह कभी समाप्त होगी भी। इतना कुछ है हमारे पास जानने के लिए कि लगता है अभी तो कम जाना। आश्चर्य की बात नहीं है कि हिन्दी भाषा के साथ-साथ यहाँ पर कुमाऊँनी भाषा में साहित्य रचने वालों की भी कमी नहीं रही। उत्तराखण्ड के लोककवि 'शेरदा' अनपढ़ के बारे में कुछ में जाना। आपने पूर्वोत्तर के प्रान्त आसाम के बारे में जाना। इस बार आपको हिमाचल के दूर-दराज़ गाँवों के बारे में जानने को मिलेगा। हमें आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि यह जानकारी मनोरंजन के साथ ही कहीं न कहीं हमारे, आपके, विद्यार्थियों अथवा पर्यटकों के लिए बहुत काम की सिद्ध होगी। -आशा शैली

भारत गणराज्य में हिमाचल प्रदेश एक ऐसा राज्य है, जहाँ प्रकृति की देवी ने जी खोलकर अपना नैसर्गिक सौन्दर्य बिखेरा है। घने-घने पेड़ों से भरपूर वन, वादियाँ, घाटियाँ और स्वच्छ एवं स्वास्थ्यवर्द्धक वातावरण यात्रियों को अनायास ही नहीं सायास भी अपनी ओर आकर्षित करता है। यहाँ की भौगोलिक स्थिति बड़ी ही सम्मोहक है। कहीं पर विशाल मैदान हैं तो कहीं कलकल निनादिनी छोटी-बड़ी नदियाँ मधुर एवं मादक संगीत सुनाती प्रतीत होती हैं। आसमान से बातें करते गगनचुम्बी पहाड़, जिनमें श्वेत, धवल हिमधारा पर मुकुट का आभास प्रदान करते हैं। मानो धरती माता को बेशकीमती रत्नजड़ित मुकुट पहनाया हो। छोटी-छोटी पहाड़ियों में सघन वन-मालाएँ। इन सुरम्य वादियों में कई पौराणिक गाथाएँ गूढ़ रहस्यों को समेटे वक्त के तकाजे के साथ लुप्त होती जा रही हैं, किन्तु ये ऐसी गाथाएँ हैं जो हिमाचल प्रदेश को देवभूमि एवं तपोभूमि सिद्ध करती हैं। इन गाथाओं की शुचिता आज भी लोगों को मानसिक शान्ति प्रदान करती हैं।

पालमपुर उपमण्डल की बड़सर पंचायत के अन्तर्गत एक गाँव है खारटी, जोकि प्राचीन समय में चन्द्रनगर नाम से भी जाना जाता था। खारटी, खैटल शब्द से उत्पन्न हुआ है। खैटल से अभिप्राय अत्यधिक पत्थरों का होना है। खारटी गाँव के वयोवृद्ध लोगों सर्वश्री मुरली राम और जोगा राम ने बताया कि यहाँ बहुत ही अधिक पत्थर थे, इसी वजह से खालटी कालान्तर में खारटी हो गया। खरटी गाँव बाणगंगा बनेर के दाहिने किनारे पर स्थित है। इस गाँव के ऊपर जो पहाड़ी है उसे चन्द्रधार कहते हैं। किसी समय यहाँ राजा चन्द्रभान का राज्य था, उसका महल इस चोटी की उपत्यका में अवस्थित था। यहीं पर सिद्धपीठ हिमानी माँ चामुण्डा का प्रसिद्ध मन्दिर है। माँ आदि हिमानी चामुण्डा राजा की कुलदेवी थी।

राजा चन्द्रभान प्रत्येक दिन बाणगंगा में प्रातः स्नान करने के लिए आता था। किंवदंती है कि माँ आदि हिमानी सुबह उसके साथ-साथ यहाँ तक आती थी। वापसी पर वह तीन जगह विश्राम करता था। नहाने के पश्चात बाणगंगा (बनेर) के ऊपर